Toppersnotes®
Unleash the topper in you

MP – TET

प्राथमिक शिक्षक पात्रता परीक्षा (वर्ग - 3)

मध्यप्रदेश कर्मचारी चयन मण्डल (MPESB)

भाग - 3 (ब)

संस्कृत भाषा

SIERRA INNOVATIONS

विषयसूची

S No.	Chapter Title	Page No.
1	संस्कृत शिक्षण विधयः	1
2	संस्कृत भाषाकौशलस्य विकासः	6
3	संस्कृतशिक्षणे – अधिगम, संप्रेषणस्य, पाठ्यपुस्तकानि	12
4	संस्कृतभाषाशिक्षणस्य मूल्यांकन	14
5	संस्कृत शिक्षण सिद्धान्ताः	16
6	नवीन विधियाँआधुनिक विधिया	18
7	नवीनतम उपागम	22
8	संस्कृतसाहित्येतिहास	25
9	गद्यशिक्षणम्	29
10	गद्यांश एवं पद्यांश	38
11	व्याकरणशिक्षणम्	42
12	वर्ण विचार उच्चारण स्थान	47
13	संज्ञाप्रकरणतः	49
14	सर्वनाम रूप	52
15	कारकप्रकरणम्	55
16	धातुरूपाणां	59
17	वचन	64
18	संधिः	65
19	समासा:	72
20	उपसर्गा:	75
21	प्रत्ययप्रकरणम्	76
22	शब्दरूपाणां	83
23	अव्ययानां प्रयोगः	89

विषयसूची

S No.	Chapter Title	Page No.
24	माहेश्वर सूत्र	91
25	अलंकार	93
26	अनुवादशिक्षणसोपानानि	95
27	अशुद्धिसंशोधनम्	106
28	घटिकाचित्रसाहाय्येन समय – लेखनम्	107
29	छन्दः शास्त्र परिचय	111

1 CHAPTER

संस्कृत शिक्षण विधयः

प्राचीनकाल में संस्कृत की शिक्षा प्रकृति के सुरम्य वातावरण में गुरुकुलों व आश्रमों में दी जाती थी। गुरु के साथ गुरुकुल अथवा आश्रम में रहकर शिष्य गुरु की सेवा सुश्रूषा करता हुआ नियमित दिनचर्या व्यतीत करता था। इस समय इन्द्रादि देवताओं की उपासना के लिए वैदिक मंत्रों की रचना की गयी थी और यज्ञ को प्रोत्साहन दिया गया था।

तत्कालीन शिक्षा का सम्पूर्ण स्वरूप सामाजिक दृष्टिकोण से तैयार किया गया था और छात्रों को उन्हीं बातों की शिक्षा दी जाती थी जिनका समाज से घनिष्ठ संबंध होता था।

अध्यापन एक कला है। भारत में वैदिककाल से ही संस्कृत अध्यापन के लिए कुछ शिक्षण पद्धतियाँ है। छात्रों के मानसिक विकास व शिक्षा के लिए विधियाँ आवश्यक है।

सम्पूर्ण संस्कृत भाषा की शिक्षा किन–किन विधियों से प्राचीनकाल में दी जाती रही है, आधुनिक काल में किन विधियों से दी जा रही है तथा दी जानी चाहिये? इन प्रश्नों के समाधान हेतु संस्कृत शिक्षण की विधियों को तीन भागों में बाँटा जा सकता है।

संस्कृत शिक्षण की विधियाँ

प्राचीन विधि / परम्परागत विधि

1. पाठशाला पद्धति
   - (i) मौखिक एवं व्यक्तिगत शिक्षण विधि
   - (ii) पारायण विधि
   - (iii) वाद–विवाद विधि
   - (iv) प्रश्नोत्तर विधि
   - (v) सूत्र विधि
   - (vi) व्याख्या विधि
   - (vii) कथा–कथन विधि
   - (viii) कक्षा नायक विधि
   - (ix) भाषण विधि
   - (x) व्याकरण विधि
2. व्याकरण–अनुवाद विधि (भण्डारकर विधि)

नवीन विधि / आधुनिक विधि

1. पाठ्य पुस्तक विधि
2. प्रत्यक्ष विधि
3. विश्लेषणात्मक विधि
4. व्याख्या विधि
5. व्याकरण विधि
6. हरबार्टी पञ्चपदी
7. मूल्यांकन विधि
8. संरचना विधि
9. समवाय विधि

नवीनतम उपागम / नवीनाचार

1. सूक्ष्म शिक्षण उपागम
2. आगमन उपागम (हिल्दा ताबा का शिक्षण प्रतिमान)
3. समस्या समाधान उपागम
4. प्रायोजन कार्य विधि
5. दल शिक्षण
6. पर्यवेक्षण अध्ययन उपागम
7. कम्प्यूटर पर आधारित शिक्षण प्रतिमान
8. अभिक्रमितानुदेशन
9. संग्रन्थन उपागम
10. निदानात्मक परीक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण

प्राचीन विधि / परम्परागत विधि / मौलिक विधि

संस्कृत शिक्षण की वे विधियाँ जो वैदिक काल में प्रयोग में लाई जाती थी तथा पाश्चात्य शिक्षा पद्धति के बाद जो विधि सबसे पहले संस्कृत शिक्षण के लिए प्रयुक्त की गई, उन्हें प्राचीन विधि के अन्तर्गत रखा गया है।

1. पाठशाला विधि

- यह संस्कृत शिक्षण की प्राचीनतम विधि है।
- इसे पण्डिल प्रणाली, परम्परागत विधि, गुरुकुल परम्परा, प्राचीन पद्धति, व्याकरण पद्धति आदि नामों से भी जाना जाता है।
- सत्रहवीं शताब्दी तक पाठशालाओं, आश्रमों, गुरुकुलों, मठों तथा विद्यापीठों में यह शिक्षा पद्धति नियमित रूप से चलती रही। (आश्रमेषु, गुरुकुलेषु च मठेषु)
- एषा प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धतेः प्रतिनिधिः अस्ति।
- धीरे–धीरे ''लॉर्ड मैकाले'' की शिक्षा पद्धति के जाल के विस्तार के साथ ये उपेक्षित होती चली गई।

मुख्योदेश्य – संस्कृताध्ययन द्वारा ज्ञानार्जन करना, भारतीय संस्कृति के ज्ञानार्जन को एक पीढी से दूसरी पीढी में हस्तान्तरित करते हुए भारतीय संस्कृति का परिरक्षण करना।

- इस पद्धति से शिक्षारम्भ ''उपनयन संस्कार'' के साथ होता था।
- गुरु छात्र को गायत्री मंत्र का उपदेश देता था। इस मंत्र की दीक्षा के बाद से ही शिक्षा आरम्भ हो जाती थी।

- छात्र उत्तर दिशा की ओर मुख कर, आचमन कर, ब्रह्मजलि बाँधकर गुरु के समीप विद्या पढता था।
- अध्ययन के आरम्भ तथा अन्त में वह गुरु को साष्टांग प्रणाम कर दाहिने दाथ से दाँये पैर के अंगूठे की ओर बाएँ हाथ से बाएँ पैर के अंगूठे को स्पर्श करता था।
- कुश से अपने शरीर का मार्जन करके तीन बार प्राणायाम के द्वारा स्वयं को शुद्ध करके 'ओंकार' शब्द का उच्चारण करता था।
- धर्म, काम, अर्थ तथा मोक्ष ही शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य थे। (पुरुषार्थ चतुष्टय प्राप्तिरेव)
- यह विधि ब्रह्मचर्य पर आधारित थी।
- इसमें गुरु और शिष्य के संबंध ''पितापुत्रवत्'' होते थे।
- अध्यापक के पास रहने वाले शिष्य ''अन्तेवासी'' कहलाते थे।
- उस समय शिष्य के लिए छात्र शब्द का प्रयोग किया जाता था, क्योकि सदैव अपने आचार्य की सेवा करना तथा छात्र की भाँति उनकी रक्षा करना छात्र का परम कर्त्तव्य था।
- उस समय उच्च शिक्षा का अधिकार सब को नहीं था।
- पाठ्यक्रम में 12 वर्ष तक वेदों का अध्ययन करवाना निर्धारित था।
- आत्मानुशासन
- गुरु की आज्ञा का पालन करना छात्र का सबसे बडा दायित्व था। उन्हें यम–नियम, अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, लोभ, मोह, त्याग आदि नियमों का पालन करना अनिवार्य था।
- **श्रोतिय शिक्षक** – छन्दों का शुद्ध – शुद्ध पाठ करने वाले।
- **वैय्याकरण** – व्याकरण पढने वाले छात्र को कहते है।।

परम्परागत पद्धति के उद्देश्य

- भारतीय संस्कृतेः परिरक्षणम्।
- सम्प्रदायः, सभ्यताः, संस्कृतिः, देशभक्तिः इत्यादीनां प्रधानतया सम्पादनम्।
- वेदाः, उपनिषद्ः, पुराणानि, इतिहास, इत्यादीनां ज्ञानं सम्पाद्य, ईश्वर–भक्तेः – धार्मिक भावनायाश्च संवर्द्धनम्।
- चतुर्णां पुरुषार्थनां सम्पादनम्।
- सच्चरित्र्य–सम्पादनम्।
- समीचीन–व्यक्तित्वसम्पादनम्।
- आत्मसंयमन, चिन्तन–तर्कशक्त्यादीनां सम्पादनम्।
- संस्कृतशास्त्राणां गंभीराध्ययनम्/आदर्शपण्डितानां निर्माणम्।
- शास्त्रार्थ प्रशिक्षणम्।
- प्रशिक्षणस्थानान्तरणम्।

पाठशाला विधि का पाठ्यक्रम

- प्रारम्भे शब्दरूपावलिः, धातुपाठ, सन्धि, समास, अमरकोशः इत्यादीनां कण्ठस्थीकरणम्।
- साहित्यस्य परिचयः, लघुसिद्धान्त कौमुदीस्थ सुत्राणां, कण्ठस्थीकरणम्, व्याख्यायाः प्रस्तुतीकरणम्।
- संस्कृते सरलगद्य–पद्य–रूपकाशानां पाठनम्।
- मध्यसिद्धान्तकौमुदी, सिद्धान्तकौमुदी, अष्टाध्यायी, महाभाष्यादि ग्रन्थानां पाठनम्।
- काव्यानां, प्रकरणग्रन्थानां दृढ़तरम् अध्ययनम्।
- कविता, गद्यं, रूपकं, चम्पूः साहित्यकसमालोचनञ्च पाठनम्

पाठशाला विधि के गुण

1. यह विधि भारतीय संस्कृति का संरक्षण करने में तथा संस्कृत साहित्य के अनुसंधान के लिए उपयोगी है।
2. अभ्यास व स्मरणशक्ति का सर्वाधिक प्रयोग।
3. नैतिक मूल्यों का विकास।
4. स्वाध्याय की आदत का विकास।
5. भाषा पर पूर्ण अधिकार प्राप्त करने में सहायक है।
6. छात्रों में अनुसंधान की भावना उत्पन्न करने में उपयोगी है।
7. कण्ठस्थीकरण को प्रमुखता है।
8. सर्वप्रथम मौखिक कार्य होता है, जो शिक्षण सिद्धान्त के अनुरूप है।
9. चरित्र निर्माण।
10. छात्रों में आत्म संयम, मौलिक चिन्तन, तर्कशक्ति, निरीक्षण शक्ति का विकास।
11. छात्रों में आध्यात्मिक भावना के विकास में सहायक है।

पाठशाला विधि के दोष

1. रटन्त स्मृति पर अधिक बल।
2. सृजनात्मक शक्ति का विकास नहीं हो पाता।
3. मौखिक पक्ष का ही विकास लेखन का नहीं।
4. सामान्य तथा मंदबुद्धि छात्रों के लिए उपयोगी नहीं है।
5. कठोरानुशासन।
6. इस विधि में भाषा की अन्य विधाएँ उपेक्षित हो जाती है।
7. मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के प्रतिकूल। (अमनोवैज्ञानिक विधि)
8. व्यवसायोन्मुखी नहीं है।

पाठशाला विधि की शिक्षण प्रविधियाँ

(i) मौखिक एवं व्यक्तिगत शिक्षण विधि
(ii) पारायण विधि
(iii) वाद–विवाद विधि
(iv) प्रश्नोत्तर विधि
(v) सूत्र विधि
(vi) कथा कथन विधि
(vii) कक्षानायक विधि
(viii) भाषण विधि
(ix) व्याख्या विधि
(x) व्याकरण विधि

(i) मौखिक एवं व्यक्तिगत शिक्षण विधि

- वैदिक शिक्षा मौखिक होती थी। गुरु स्वयं वेद मंत्रों का उच्चारण कर छात्रों को अनुकरण करवाते थे।
- उच्चारण संबंधी दोष को गुरु व्यक्तिगत रूप से छात्रों को बताते थे।
- प्रतिदिन नवीन पाठ प्रारम्भ करने से पूर्व गत पाठ का मूल्यांकन किया जाता था और अब तक पढें गये पाठों के मुख्य बिन्दुओं को आवृत्ति के बाद ही उन्हें आगे पढाया जाता था।
- कंठस्थीकरण पर अधिक बल था। उनका मानना था –

  पुस्तकस्था तु या विद्या परहस्तगतं धनम्।
  कार्यकाले समुत्पन्ने न सा विद्या न तद्धनम्।

लाभ

- इससे छात्रों का उच्चारण शुद्ध होता है।
- विषय पर स्थायी तौर पर अधिकार होता था।
- मौखिक अभिव्यक्ति सशक्त होती थी।

(ii) पारायण विधि

- इस विधि में कंठस्थीकरण पर बल देते हुए वैदिक मंत्रों को बार–बार आवृत्ति करके उन्हें कण्ठस्थ करवाया जाता था।
- वैदिक मंत्रों के सस्वर पाठ को ''पारायण'' कहते है।
- ऐसा करने वाले को ''पारायणिक'' कहा जाता था।
- अच्छी स्मृति वाले छात्र जो बिना प्रयत्न के वैदिक पाठों को कण्ठाग्र कर लेते थे ''अवृच्छ'' कहलाते थे।
- वेदों को कण्ठाग्र करने की प्रक्रिया को भी अलग–अलग नाम दिये गये है। जैसे – पाठ को पाँच बार पढना (पञ्चक अभ्यास), शब्दों को पाँच बार कहना (पञ्च बार) पाँच प्रकार से पढना। (पञ्च रूप)।
- इससे अधिक बार पाठायण करने की संख्याओं को सप्तक, अष्टक, नवक आदि कहा जाता था।
- अशुद्धियों की गणना के आधार पर एक अशुद्धि करने वाले छात्र को ''एकान्यिक'', दो अशुद्धि करने वाले छात्र को ''द्वैयन्यिक'' तीन अशुद्धियाँ करने वाले को ''त्रैयन्यिक'' कहा जाता था।

लाभ

- इस विधि का सबसे बडा लाभ यह था कि इसमें प्राप्त ज्ञान को स्मृति में संचित करने पर बल दिया जाता था।

(iii) वाद–विवाद विधि

- अर्थज्ञान विधि/अर्थावबोधन विधि भी कहते है।
- इसे तर्कविधि व खण्डन–मण्डन विधि के नाम से भी जाना जाता है।
- केवल कण्ठस्थीकरणेन प्रयोजनं नास्ति अर्थज्ञानमपि आत्यावश्यकमिति।
- अस्य विधेः प्रयोजनमूलम् इति निरूक्तवर्णम् अत्र मुख्याधारो भवति।
- महर्षिपतंजलिरपि निगदति यत् अग्निं विना शुष्ककाष्ठं यथा ज्वलितुं न प्रभवति तथैव अर्थज्ञानं विना केवलं कण्ठस्थीकरणं न प्रकाशेते।
- शास्त्रार्थ व संवाद इसी के उदाहरण है, जैसे गार्गी द्वारा किये गये प्रश्न।

लाभ

- इससे छात्रों में भाव प्रकाशन की शक्ति बढती है।

(iv) प्रश्नोत्तर विधि

- **प्रवर्तक –** सुकरात
- इसे सुकराती विधि, संवाद विधि, डायलेक्टिक मैथड के नाम से भी जाना जाता है।
- इस विधि में शिक्षक विविध प्रश्नों के माध्यम से छात्रों से उत्तर प्राप्त करके पाठ को आगे बढाते थे।
- इस विधि में प्रश्नों के माध्यम से व्याख्यान होता था।
- प्रत्येक प्रश्न के पश्चात् छात्र उसकी आवृत्ति करते थे।
- कभी–कभी कुछ प्रश्नों का विस्तृत उत्तर न देकर केवल संकेत कर दिया करते थे। छात्र उनके आधार पर ही उनके सही उत्तर ढूँढने का प्रयत्न करते थे ।

लाभ

- जिज्ञासु छात्र सक्रिय होते थे।
- स्वचिन्तन, तर्क व निरीक्षण शक्ति के विकास पर बल दिया जाता था।

(v) सूत्र विधि

- व्याकरण व दर्शन शिक्षण की प्राचीनतम विधि है। यह इसी से पढाये जाते थे।
- सूत्रों का मुख्य उद्देश्य ''गागर में सागर'' भरना था। इससे विषय को याद रखने में सुविधा होती थी। इन सूत्रों की व्याख्या के लिए भाष्यविधि व टीका विधा का अनुसरण किया।

लाभ

- जटिल विषय को याद रखने व समझने में सुविधा होती थी।

Unleash the topper in you

(vi) कथा कथन विधि

- विषय को रूचिकर, बनाने के लिए तथा अधिक स्पष्ट करने के लिए यह विधि है।
- इस विधि में उपनिषद्, हितोपदेश तथा पंचतंत्र की कथाएँ बीच–बीच में सुनाई जाती थी।

लाभ

- अध्ययन को सरस बनाने में सहायक थी।
- कल्पना शक्ति का विकास होता है।

(vii) कक्षानायक विधि

- प्राचीनकाल में मेधावी छात्र अपने गुरु को अध्यापन कार्य में सहायता देते थे।
- गुरु के अस्वस्थ होने अथवा बाहर जाने की स्थिति में ऐसे छात्र गुरुकुल के अन्य छात्रों को पढाते थे।

लाभ

- इससे मेधावी छात्रों का ज्ञान और परिपुष्ट होता था।
- गुरु का कार्यभार हल्का होता था।
- उन्हें शिक्षक प्रशिक्षण भी मिल जाता था।
- मेधावी छात्रों/सहायक अध्यापकों में आत्मविश्वास आता था।

(viii) भाषण विधि

- विषय को स्पष्ट करने के लिए गुरु उदाहरणों व कथाओं आदि का सहारा लेते थे तथा लम्बे–लम्बे व्याख्यान व भाषण देते थे।

लाभ

- इससे छात्रों को किसी विषय पर विस्तृत जानकारी प्राप्त हो जाती थी।

(ix) व्याख्या विधि

- छात्रों की शंकाओं का समाधान करने के लिए गुरु व्याख्या विधि तथा अर्थवाद का अनुसरण करते थे।
- व्याख्या के छः अंग है – पदच्छेदः पदार्थोक्ति विग्रह वाक्ययोजना।
  अक्षेपश्च समाधानं व्याख्यानं षड्विधं स्मृतम्।।
- भर्तृहरि ने कहा है – संयोगो विप्रयोगश्च साहचर्य विरोधिता।
  अर्थः प्रकरणं लिC शब्दस्यान्यस्य सन्निधिः।।
  अर्थात् किसी शब्द के अर्थ को समझने के लिए संयोग, विप्रयोग, साहचर्य, वैधर्म्य, अर्थ, प्रकरण, लिC, सन्निधि, औचित्य, देश, काल, व्यक्ति, स्वर आदि बातों की जानकारी की आवश्यकता होती है।
- धीरे–धीरे जटिल पदों का अर्थ स्पष्ट करने के लिए संस्कृत भाषण के साथ–साथ प्राकृत तथा अन्य भाषाओं का भी प्रयोग किया जाने लगा।
- पतजंलि के अनुसार व्याख्या के 4 अंग हैः– चर्चा, उदाहरण, प्रत्युदाहरण, वाक्यांध्याहार।

लाभ

- विषय की विस्तृत जानकारी होती थी।
- शब्दों की संरचना से परिचय होता था।
- भाषा पर अधिकार होता था।

(x) व्याकरण विधि

- भाषा का 'प्राण तत्व' है व्याकरण, इसलिए किसी भी भाषा को पढाने के लिए उसके व्याकरण का ज्ञान दिया जाना आवश्यक है।
- वेदों के अध्ययन के लिए पुराने समय में व्याकरण का विशेष पठन–पाठन होता था।
- पतंजलि ने महाभाष्य में लिखा है– 'रक्षार्थं' वेदानाम्, अध्येयं व्याकरणम्।
- प्रारम्भ में कौमुदी के सूत्र, अमरकोश के श्लोक, शब्द तथा धातु रूपावली कण्ठस्थ करवाकर उनकी व्याख्या और उपयोग बताया जाता था।

लाभ

- इससे छात्र संस्कृत भाषा की सूक्ष्मताओं को जान पाते है।
- भाषा का शुद्ध, परिष्कृत व परिमार्जित ज्ञान हो जाता है।

निष्कर्ष – पाठशाला पद्धतिः मठेषु, आश्रमेषु, पाठशालासु, विद्यालयेषु, महाविद्यालेषु, संस्कृतविश्वविद्यालयेषु च प्रचलिता वर्तते।

व्याकरणस्य संस्कृतसाहित्येः महत् प्रामुख्यम् अस्ति। परम्परागत–पद्धत्यां साहित्यस्य कृते मुख्यं स्थानं व्याकरणस्य गौण स्थानं प्रदीयते। मनोविज्ञान सिद्धान्तानाम् अनुसरणाभावे अपि अस्याः पद्धतेः महत्वमस्ति। अनुभवेन ज्ञायते यत् पद्धत्याः उत्कृष्टाः पण्डिताः, उत्तमाः विद्वांसः कवयश्च निर्मिताः अभवन्। भारतीय संस्कृतेः, साहित्यस्य च संरक्षणाय इयं पद्धति, नितरामुपयुक्ता भवति।

2. व्याकरण – अनुवाद विधि (भण्डारकर विधि)

- **प्रवर्तक** – डॉ. रामकृष्ण गोपाल भण्डाकर
- **समर्थक** – वामन शिवराम आप्टे (रचना – The Student's Guide to Sanskrit Composition)

भण्डारकर ने दो पुस्तके लिखी –

1. मार्गोपदेशिका – 31 पाठ

2. संस्कृतमन्दिरान्तः प्रवेशिका – 26 पाठ

- यह विधि 1835 ई. में लॉर्ड मैकाले की शिक्षा पद्धति के साथ विकसित हुई।
- इसमें पाश्चात्य शिक्षण शैली को अपनाकर संस्कृत शिक्षण विधि की कल्पना की गई है।

- संस्कृत को केवल व्याकरण और अनुवाद द्वारा सरल ढंग से पढाने पर बल दिया गया।
- इस विधि को भण्डाकर के साथ–साथ कैलहोरन, मोनियर, मैकडॉनल आदि अन्य पाश्चात्य विद्वानों ने अपनाया।

व्याकरणानुवाद विधि के चार सोपान –

1. सोदाहरण व्याख्या
2. संस्कृत से अंग्रेजी में अनुवाद
3. अंग्रेजी से संस्कृत में अनुवाद
4. शब्दकोष का ज्ञान

भण्डारण विधि के उद्देश्य

1. प्रौढानां, बालानां च कृते सुलभतया संस्कृताध्यापनम्।
2. विशिष्ट–आंग्लेयानां संस्कृताध्यापने अभिरुचि–उत्पादनम्।
3. संस्कृतभाषायाः वर्गीकरणं कृत्वा सरलतया संस्कृतविषयोपपादनम्।
4. विषय कण्ठस्थीकरणस्य दूरीकरणम्, स्वयं शक्त्याः जागरणम्, अनुभवज्ञानसम्पादनञ्च।
5. संस्कृते प्राथमिक ज्ञानसम्पादनम्।
6. व्याकरणेन अनुवादेन च संस्कृताध्यापनम्।
7. सरलव्याकरणज्ञान सम्पादनम्।
8. संस्कृताध्ययने विद्यमानायाः भीतेः दूरीकरणम्।
9. संस्कृताध्ययनं कठिनं नास्तीति ज्ञापनम्।
10. संस्कृतभाषातः आंग्ले, आंग्लतः संस्कृते अनुवादाभ्यास–सम्पादनम्।

भण्डाकर विधि के गुण

1. इसके अन्तर्गत व्याकरण के नियमों को बोधगम्य बनाया जाता है।
2. इस विधि में छात्रों में स्वाध्याय की आदत के विकास पर बल दिया जाता है।
3. इस विधि में संस्कृत के नियमों का वर्गीकरण मनोवैज्ञानिक ढंग से करते हुए शिक्षण सूत्रों का अनुसरण किया जाता है।
4. इस विधि में बडे समूह को भी सरलता से पढाया जा सकता है। अतः इससे समय, शक्ति और धन की बचत होती है।
5. इस विधि में कण्ठस्थीकरण की अपेक्षा छात्रों की विचारशक्ति को जागृत किया जाता है।
6. यह विधि मनोवैज्ञानिक है।
7. गुरु की सहायता के बिना भी संस्कृत भाषा अध्ययन में समर्थ।
8. स्थूलात् सूक्ष्मं प्रति, ज्ञातादज्ञातं प्रति, मनोविज्ञानात्, विज्ञानं प्रति, सरलात् कठिन्यं प्रति अभ्यासात् अधिगमं प्रति इत्यादि का अनुसरण।

भण्डारकर विधि के दोष

1. व्याकरणस्य अनुवादस्य च महत्वमस्ति, न तु भाषायाः।
2. यह विधि नीरस व एकांगी है।
3. प्रारम्भिक स्तर की अपेक्षा उच्च स्तर के लिए ही उपयोगी है।
4. इसमें भाषा के विविध पस जैसे – उच्चारणाभ्यास, मौखिक कार्य, पद्यों की रसानुभूति, गद्यों की मुख्य भाव आदि उपेक्षित रह जाते है।
5. श्रवण व भाषण कौशल का विकास नहीं होता।

Toppersnotes
Unleash the topper in you

2 CHAPTER

संस्कृत भाषाकौशलस्य विकासः

भाषा एक ऐसी व्यवस्था है जिसके द्वारा हम अपने विचारों को व्यक्त कर सकते हैं और दूसरों के विचारों एवं अभिप्रायों को हम स्वयं समझने के लिए प्रयोग में लाते हैं।

व्युत्पत्ति → भाष् + अच् + टाप् = भाषा

↓ ↓ ↓

धातु प्रत्यय

- 'भाष्' वाक्तव्यां वाचि।
- अंग्रेजी में Language कहते हैं। यह शब्द लैटिन भाषा के "Lingua" शब्द से बना है जिसका अर्थ है- "जिह्वा"
- स्वीट महोदय ने कहा है- ध्वन्यात्मक शब्द विचाराणां प्रकटनमेव भाषा । अर्थात्-विचारों को ध्वन्यात्मक रूप में प्रकट करने का साधन "भाषा" कहलाती है।
- भाषा के दो रूप होते हैं-1. मौखिक, 2. लिखित
- मौखिक रूप में सुनना व बोलना तथा लिखित रूप में पढ़ना व लिखना समाहित होता है।
- भाषा सिखने का स्वाभाविक और मनोवैज्ञानिक क्रम है- श्रवण → भाषण → पठन → लेखन

भाषायी कौशल

- बालक सुनकर बोलकर, पढ़कर और लिखकर विचारों का आदान-प्रदान करता है। अतः इन चारों योग्यताओं को विकसित करना ही भाषाशिक्षण का प्रमुख उद्देश्य होता है। इन्हें ही भाषा शिक्षण के कौशलात्मक उद्देश्य तथा ये उद्देश्य ही 'भाषायी कौशल' कहलाते हैं।

भाषा कौशल के क्रमशः चार चरण हैं- (**LSRW**)

1. श्रवणम् (Listening) L
2. भाषणम्/ वदनम् (Speaking) s
3. पठनम् (Reading) R
4. लेखनम् (Writting) bersu W

- भाषा के अधिगम के लिए इन कौशलों को इसी क्रम में याद करना होगा, तभी भाषा का सही विकास सम्भव हो पायेगा।
- इन चारों कौशलों में दो कौशल (श्रवण पठन) मस्तिष्क द्वारा ग्रहण (Input) करने से संबंधित है तथा दो कौशल (भाषण, लेखन) अभिव्यक्ति (प्रेसण) (Output) से सम्बन्धित है।
- भाषण से पूर्व श्रवण का होना अत्यावश्यक है ही, लेकिन लेखन से पूर्व पठन का भी होना अत्यावश्यक है। लेखन से पूर्व वर्गों तथा शब्दों का पठन जरूरी है।
- श्रवण और वदन/ भाषण कौशल " ध्वनि विज्ञान" से जुड़े हुए हैं।
- पठन एवं लेखन कौशल “लिपिविज्ञान" से जुड़े हुए हैं।
- संस्कृत शिक्षण में अभिव्यक्ति से ज्यादा ग्रहण पर बल दिया जाता है। "डॉ. रघुनाथ सफाया " ने लिखा है- "संस्कृत में ग्रहण अधिक आवश्यक है, अभिव्यक्ति नहीं। "
- भाषा का सम्पूर्ण विकास अभिव्यक्ति की उपेक्षा कर ग्रहण पर अधिक बल देकर सम्भव नहीं है। अतः हमें प्रयास करना चाहिए की ग्रहण करने के साथ-साथ हम सरल एवं मनोवैज्ञानिक तरीके से अभिव्यक्ति भी कर सकें। भाषा सिखने का मनोवैज्ञानिक चरण जिज्ञासा x प्रयत्न (तत्परता) x अनुकरण x अभ्यास

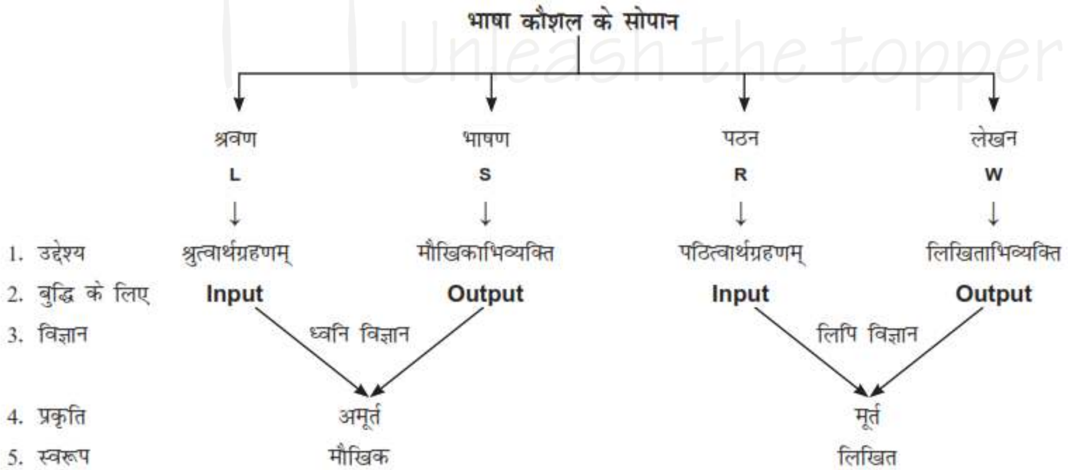

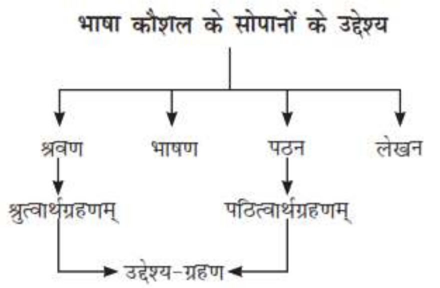

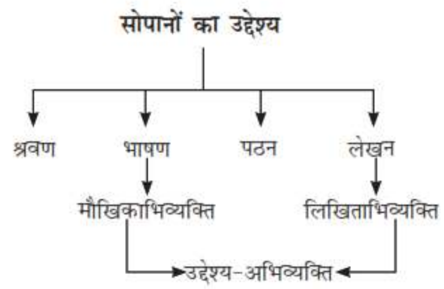

1. श्रवणकौशलम्

- उद्देश्यम् → श्रुत्वा अर्थग्रहणम्/भावानाम् अवबोधकरणम्
- यह भाषा का प्राथमिक कौशल है। इसलिए इसे " प्राथमिक कौशल" भी कहा जाता है।
- इसका उद्देश्य सुनकर के अर्थ ग्रहण करना है।
- इस कौशल के माध्यम से व्यक्ति के भावों का भी ज्ञान होता है। अतः इसे " भावग्रहण कौशल" भी कहते हैं।
- "प्राथमिक लसित अधिगम विशेष "
- प्रथमतः भाषा का ग्रहण श्रवण के माध्यम से ही होता है।
- इस कौशल का संबंध " श्रवणेन्द्रिय" से है।
- भाषा का ग्रहण प्रायः श्रवण के माध्यम से ही होता है लेकिन केवल सुनना मात्र श्रवण कौशल नहीं है बल्कि ध्यानपूर्वक सुनकर वक्ता के आशय को ग्रहण करना ही श्रवण कौशल है।
- यह कौशल अन्य तीन कौशलों का मूल आधार है।
- श्रवण शक्ति के तीव्र होने पर भाषा सीखने की गति बढ़ जाती है।

श्रवण कौशल के विकास के तत्त्व

- विषय का रूचिकर होना।
- धैर्यपूर्वक मनोयोगपूर्वक, अर्थग्रहण पूर्वक वक्ता को सुनना ।
- वक्ता के प्रति श्रद्धा।
- वक्ता के मुख से उच्चारित ध्वनियों को ध्यानपूर्वक सुनना ।
- उच्चारण स्थान और उच्चारण प्रयत्नों का छात्र को उचित ज्ञान देकर।
- कक्षा-कक्ष का सुरम्य वातावरण बनाकर ।
- वक्ता की सम्प्रेषण की शैली अगर उचित है तो श्रवण का विकास होता है।
- आकाशवाणी, दूरदर्शन, नाटक, चलचित्र आदि के माध्यम से सम्प्रेषण।

श्रवण कौशल के साधन

1. परिवार के सदस्य
2. आकाशवाणी
3. दूरदर्शन (टी.वी. द्वारा)
4. ध्वनिमुद्रण यंत्र (टेप रिकॉर्डर)
5. गुरुमुख (अध्यापक वाचन)
6. दूरवाणी (टेलीफोन द्वारा)
7. संगणक यन्त्र (कम्प्यूटर द्वारा)
8. ध्वनिविस्तारक यंत्र (लाउडस्पीकर)

श्रवण कौशल की आवश्यकता

- शब्दों के शुद्ध एवं स्पष्ट उच्चारण के लिए।
- सुनकर पुनः कहने के लिए।
- शब्दों के अर्थ जानने व पहचानने के लिए।
- भाषणसामर्थ्य (बॉलने का सामर्थ्य) विकास हेतु ।
- अनुवाचनक करने के लिए।
- अनुप्रयोग सामर्थ्य उत्पन्न करने के लिए।
- मनोरन्जन के लिए।

श्रवण कौशल में बाधाएँ

- विषय रूचिकर न होना।
- वक्ता द्वारा अस्पष्ट बोलना।
- श्रोता का ध्यान सुनने की बजाय और कहीं होना ।
- श्रोता का बहरा होना।
- वातावरण में कोलाहल ज्यादा होना।
- वक्ता की शैली अनुचित होना जैसे तेज व धीमी आवाज में बोलना भाषा का तुतलायी हुई या ज्ञान नहीं होना ।
- वक्ता को उच्चारण स्थानों का ज्ञान नहीं होना ।

श्रवण कौशल सम्पादन की विधियाँ

1. आदर्शवाचन विधि
2. सस्वरवाचन विधि
3. कथा-कथन
4. प्रश्नोत्तर विधि
5. वाद-विवाद विधि
6. पाठ्य-संसर्ग

2. भाषणकौशलम्

- उद्देश्यम् → मौखिकाभिव्यक्तिः
- मौखिक रूप से अपने विचारों को प्रकट करना ही भाषण कौशल का उद्देश्य है।
- सामान्य उद्देश्य → शुद्धोच्चारणम्
- भाषा शिक्षण का द्वितीय कौशल है।
- अपने आशय को प्रकट करने के लिए शब्दों का संघटित प्रयोग किया जाना ही भाषण कौशल है।
- भाषण कौशल के संवर्धन हेतु वातावरण या पारिवारिक कारक ज्यादा प्रभावकारी है।
- वाणीरूप में भाव प्रकट करना ही भाषण कौशल है।
- विचारों के आदान-प्रदान का सहज व सरल माध्यम है।
- हम जिस वातावरण में रहकर जो भी सुनते हैं और लोगों को बोलते हुए देखते हैं उसी के कारण हमारे भाषण को बल मिलता है।
- शब्दों का उच्चारण करना मात्र भाषण कौशल नहीं है, बल्कि उनका शुद्ध उच्चारण करना ही भाषण कौशल है अर्थात् शुद्धोच्चारणपूर्वक उच्चारण ही " भाषण कौशल" कहलाता है।
- भाषण कौशल दो प्रकार से सिद्ध होता है 1. अनुकरण, 2. अभ्यास

भाषण कौशल की आवश्यकता

1. शुद्ध एवं स्पष्ट उच्चारण हेतु ।
2. विविध सभाओं में सक्रिय सहभागिता हेतु ।
3. विद्यालय कार्यक्रमों में मंच संचालन हेतु।
4. शब्द भण्डार वृद्धि हेतु ।
5. भावाभिव्यक्ति हेतु।
6. भावानुरूप आरोह-अवरोह क्रम के जानने हेतु ।
7. भाव ग्रहण हेतु ।
8. गद्य एवं पद्य का गति के अनुसार भाषण ।
9. मनोरञ्जन ।
10. उच्चारण सामर्थ्य हेतु ।

Unleash the topper in you

भाषण कौशल के विकास के तत्त्व

1. भाषण कौशल के विकास के लिए वर्णों के उच्चारण स्थानों का ज्ञान आवश्यक है।
2. कठिन शब्दों का बार-बार अभ्यास करके ।
3. श्रवण के अधिकाधिक अवसर दिये जाये अर्थात् श्रवण कौशल में दक्षता प्राप्त कर ही भाषण कौशल में दक्षता प्राप्त की जा सकती है।
4. सम्भाषण पर निरन्तर बल देकर ।
5. स्वतंत्र वातावरण का निर्माण करना जिससे बालक निर्भीकता से बोल सके।
6. पर्याप्त स्वर में (न अधिक तेज न अधिक मंद) भाषण अर्थात् समान वेग से भाषण करना ।
7. भाषा चिह्नों (प्रश्नवाचक, विरामचिह्न, विस्मयचिह्न) आदि को ध्यान में रखकर बोलने का अभ्यास करवाना।
8. आरोह-अवरोह, गति यति भावानुसार भाषण का अभ्यास करवाना।

भाषण कौशल में बाधाएँ

1. उच्चारण स्थानों का ज्ञान न होना ।
2. शब्द भण्डार में कमी।
3. अशुद्ध बोलना।
4. कक्षा-कक्ष का दूषित वातावरण ।
5. ध्यान की एकाग्रता की कमी।
6. विराम चिह्नों को ध्यान में न रखना।
7. स्वर - तंत्र विकृति

भाषण कौशल के साधन

1. समूह सम्भाषण
2. कथा-कथन
3. नाटकाभिनय
4. भाषण स्पर्धा
5. शिशुगीत, अभिनयगीत आदि।
6. दूरभाष
7. भाषा क्रीड़ा
8. चित्र पठन
9. अभ्यास व अनुकरण

भाषण कौशल विधियाँ

1. सम्भाषण विधि
2. गति विधि
3. अन्त्याक्षरी विधि
4. कथा-कथन विधि
5. भाषण स्पर्धा विधि
6. वाद-विवाद विधि
7. अनुवाचन विधि

उच्चारण के समय ध्यान रखने योग्य बातें

1. बलाघात (स्थान- प्रयत्न का ध्यान)
2. स्पष्ट अभिव्यक्ति
3. विराम तथा यात
4. गति तथा शक्ति
5. मात्रा व लय का ध्यान
6. स्वराघात (ध्वनि का उतार-चढाव)

3. पठनकौशलम्

- उद्देश्य पठित्वा अर्थग्रहणम्
- यह भाषा शिक्षण का तृतीय कौशल है।
- लिखित रूप में विद्यमान अंश को पढ़कर उसके भावों को ग्रहण करना ही "पठन कौशल" कहलाता है।
- श्रवण की अपेक्षा पठन में अधिक स्थाई ज्ञान की प्राप्ति होती है।
- विषयवस्तु के सुनने में जो अशुद्धियाँ रह जाती हैं उसका पठन से निवारण हो जाता है।
- इसे " वाचन कौशल" भी कहते हैं।
- न्युइस के अनुसार पठन एक साधन है जिसके द्वारा बालक, जाति के द्वारा सचित सम्पूर्ण ज्ञान से परिचित होता है।
- पठन साध्य भी है और साधन भी।
- पठन कौशल में " लिपि" का महत्त्व ज्यादा है।
- लिपि संकेतों एवं वर्णों का उच्चारणपूर्वक, शहरों एवं वाक्यों का अर्थबोध सहित ग्रहण प्रक्रिया ही "पठनकौशल अथवा वाचनकौशल" कहलाता है। अतः इसका मूल आधार लिपिबद्ध ध्वनिरूप है।
- चारों कौशलों में महत्त्वपूर्ण कौशल है 3R में भी इसका प्रमुख स्थान है 1. रीडिंग, 2. राइटिंग 3. रिथमेटिक

पठन कौशल के उद्देश्य

- पढ़कर अर्थग्रहण करने की योग्यता उत्पन्न करना ।
- विचार-विमर्श की शक्ति का विकास करना ।
- विभिन्न शैलियों में पढ़ने की समता उत्पन्न करना ।
- भावानुकुल शब्दों व वाक्यों को विभाजित करके पढ़ने का कौशल विकसित करना। यति देकर अभिनयपूर्वक पठन करके (माध्यमिक स्तर हेतु)
- समान स्वर, आरोह-अवरोह, गति-यति-लयपूर्वक उच्चारण सामर्थ्य का विकास करना (प्राथमिक स्तर हेतु)
- निष्कर्ष ग्रहण

पठन के प्रकार

1. पाठकों की संख्या के आधार पर

(i) व्यक्तिगत पठन (एक समय में एक छात्र द्वारा)

(ii) सामूहिक पठन (एक समय में सभी छात्रों द्वारा)

2. अभिव्यक्ति के आधार पर

(i) सस्वर पठन (स्वर के साथ पठन)

(a) आदर्श वाचन (शिक्षक द्वारा)

(b) अनुकरण वाचन (छात्रों के द्वारा)

(c) समवेत वाचन (समूह में छात्रों द्वारा)

(ii) मौन पठन (मौन रहकर पठन)

(a) सामान्य मौन

(b) गंभीर मौन

(c) द्रुत मौन

1. सस्वरपठन / सस्वर वाचन

- स्वर सहित किया जाने वाला पठन 'सस्वरपठन' कहलाता है।
- इसे 'व्यक्तपठन' या 'मुखरपठन' भी कहते हैं।
- सस्वर पठन संस्कृत शिक्षण के प्रारम्भिक स्तर पर विशेष रूप से उपयोगी है।
- लिपि प्रतीकों को वाणी प्रदान कर अर्थग्रहण करना ही 'सस्वरपठन' है।

सस्वर पठन उद्देश्य

- पठन के साथ अर्थबोध कराना ।
- बालक शुद्ध उच्चारण कर सकें।
- यथास्वर वाणी में ओज, प्रमार एवं माधुर्य ला सकें।
- भावानुरूप स्वर की योग्यता का विकास करना ।
- लय-गति-यति तथा विराम चिह्नों का ध्यान रखते हुए सस्वर पाठ करने की योग्यता का विकास करना ।
- सस्वर पठन के विभिन्न चरण इस प्रकार हैं-

(a) आदर्शपठन / आदर्शवाचन

इस वाचन में शिक्षक पदों का आदर्श उच्चारण (लय - गत्यानुसार शुद्धोच्चारण) करता है। आदर्श वाचन के समय निम्न कारकों का ध्यान रखना चाहिए-

1. कक्षा में पूर्णतया शांति रहे ।
2. शब्दों का स्पष्ट व शुद्धोच्चारण हो ।
3. अध्यापक दो या तीन बार शब्दों का उच्चारण करे ।
4. ह्रस्व / दीर्घ स्वरों के उच्चारण में सावधानी रहे ।
5. भावानुकूल पाठों का पठन किया जाना चाहिए।
6. पाठगत विराम चिह्नों व अन्य प्रतीक चिह्नों का ध्यान रखें।
7. स्वर व व्यंजनों के उच्चारण में सावधानी रहे ।

(b) अनुकरणवाचन

छात्र, अध्यापक के द्वारा किये गये आदर्श वाचन का अनुकरण करते हैं।

अनुकरण वाचन के समय भी आदर्श वाचन के ही समान सभी बातों का ध्यान रखना चाहिए क्योंकि अनुकरणवाचन का अनुसरण अन्य छात्र करते हैं।

(c) पुनः वाचन / समवेतवाचन / अनुपठन

आदर्शवाचन व अनुकरण वाचन के पश्चात् शिक्षक सीभी छात्रों से भावों के अधिगम के लिए समूह वाचन करवाता है। यह प्रथमतः सस्वर रूप में तथा सस्वर के पश्चात् मौन रूप में भी हो सकता है।

प्रारम्भिक कक्षाओं के लिए श्रेष्ठ है।

सभी शब्दों का शुद्ध उच्चारण हो । ह्रस्व दीर्घ स्वरों के उच्चारण में सावधानी रहे।

2. मौनपाठन / मौनवाचन

पाठ को उसका अर्थ और भाव ग्रहण करते हुए एवं मौन रहते हुए किया गया पठन "मौनपठन" कहलाता है।

मौनपठन के उद्देश्य

- स्वाध्याय की आदत का विकास करना ।
- छात्रों में चिन्तन-मनन शक्ति का विकास करना ।
- पठन-गति बढ़ाना।
- पठित अंश के बोध ग्रहण की समता उत्पन्न करना ।
- मुख्यभावों को आत्मसात् करने की योग्यता उत्पन्न करना ।
- अर्थग्रहण की क्षमता का विकास।
- मौन पठन तीन प्रकार का होता है-

(a) सामान्य मौन पठन

- मौन रहकर पठन सामान्य उद्देश्य हेतु पठन करना, जैसे- कथा पठन, पत्र-पत्रिकाएँ, अखबार आदि का पठन ।

(b) गम्भीर मौन पठन

- पाठ्य सामग्री की तह तक पहुँचने व गंभीरतापूर्वक चिंतन मनन करने के लिए मौन पठन किया जाता है।
- सारगर्भित, तथ्यात्मक व चिन्तनात्मक हेतु गंभीर पठन किया जाता है।
- भाव-विचार- रस सौंदर्य आदि को हृदयङ्गम् करने के लिए गहन मौनपठन किया जाता है।

(c) द्रुतमौन पठन

- सरल व बोधगम्य विषयवस्तु को समझने हेतु। शब्द या वाक्यों को खोजने हेतु द्रुतमौन पठन किया जाता है।
- सीखी हुई भाषा का अभ्यास करने एवं अवकाश का सदुपयोग करने हेतु ।
- सूचना एकत्र करने व आनन्द प्राप्त करने के लिए द्रुत मौन पठन किया जाता है।

3. पठन कौशल अभिवृद्धि की विधि

1. अक्षरबोध विधि / वर्गबोध विधि/ वर्णमाला विधि/वर्णसमाम्नाय विधि/ वर्गोच्चारण विधि / वर्ण विधि / शब्द निर्माण विधि

1. सबसे प्राचीनतम व सर्वप्रचलित विधि है यह वर्ण विधि है।
2. संस्कृत वर्णमाला का स्वर व्यंजन सहित अभ्यास करवाया जाता है व वर्ण प्रधान विधि है।
3. सर्वप्रथम वर्णमाला के एक-एक वर्ण का ज्ञान व शुद्ध उच्चारण करवाते हैं।
4. वर्णज्ञान पश्चात् धीरे-धीरे दीर्घतर शब्दों का पठन ।

Unleash the topper in you

5. शब्द अभ्यास के पश्चात् वाक्यों का पठन।
6. वर्णवोध विधि में "वर्ण-पद-वाक्य कथा" रूप में चक्र चलता है।
7. यह विधि "सरलता कठिन प्रति या सूक्ष्मात् स्थूल प्रति" शिक्षण सूत्रों का अनुसरण करती है।

2. पद विधि / शब्द विधि/ देखो कहो विधि / देखो और पढ़ो विधि अमेरिका में विकास ।

- चित्रों के माध्यम से शब्दों का ज्ञान।
- पूर्व प्राथमिक स्तर के लिए उपयोगी तथा महत्वपूर्ण विधि है।
- श्रेष्ठ विधि जिसका प्रत्यक्ष उपागम में प्रयोग किया जाता है।
- यह विधि संस्कृत में शब्द रूप धातुरूप प्रकृति-प्रत्यय, संधि, समास आदि का ज्ञान करवाने की उत्तम विधि है।

3. वाक्य विधि

- सरल वाक्यों के आधार पर पठन प्रारम्भ में सरल छोटे वाक्य, बाद में कठिन वाक्य बनाकर पढ़वाया जाता है।
- लेकिन वाक्य में प्रयुक्त पदों का पूर्वज्ञान आवश्यक है।
- वाक्य संरचना का ज्ञान करवाने के कारण "संरचनात्मक उपागम" में प्रयोग।
- पठन कौशल की अभिवृद्धि हेतु सर्वश्रेष्ठ विधि है।
- सर्वोत्तम मनोवैज्ञानिक विधि।

4. कथापद्धति

- सुनी हुई कथा को भाषा के माध्यम से सरल शब्दों में सुनाया जाता है।
- वाक्य छोटे-छोटे पद परिचित हों।
- यहाँ शिक्षक कथा सम्बद्ध चित्रों का भी प्रयोग करें।

पठन कौशल के विकास हेतु उपाय

- प्राथमिक स्तर पर ही उच्चारण को सुधारने का प्रयास किया जाये।
- पठन के दौरान शुद्ध उच्चारण का ध्यान रखा जाए। अशुद्ध उच्चारण से अर्थ में परिवर्तन सम्भव है।
- अंगुलि निर्देश के साथ पढ़ना।
- शब्दों एवं वाक्यों के अन्वेषण हेतु छात्रों को कहना।
- क्रमशः वेग के साथ पठन करना।
- विषय वस्तु का सुन्दर व स्पष्ट अक्षरों में लिखा होना।
- शब्दों का परिवर्तन करके पठन

पाणनीय शिक्षा के अनुसार 'अधम व उत्तम पाठक के गुण-दोष

- पाणिनीय शिक्षा के अनुसार अधम पाठक के छः लक्षण बताये गये है-
  "गीती शीघ्री शिरः कम्पी यथालिखितपाठकः।
  अनर्षजोडल्पकण्ठश्च पेठेते पाठकाधमाः।।"
  1. गद्य को भी गाकर के पढ़ना।
  2. शीघ्र पठन करना।
  3. पढ़ते समय सिर को हिलाना ।
  4. जैसे लिखा है, उसको वैसे पढ़ना।
  5. अर्थ को बिना जाने बोलना।
  6. अल्पकण्ठ पठन करना।
- पाणिनीय शिक्षा के अनुसार उत्तम पाठक के छः गुण-
  "माधुर्यमशरव्यक्तिः पदच्छेदस्तु सुस्वरः ॥
  धैर्य लयसमर्थ च पडते पाठका गुणा:।।"
  1. मधुरता
  2. अक्षरों का स्पष्ट उच्चारण
  3. पदो का उचित विभाजन
  4. सुन्दर और शुद्ध स्वर के द्वारा उच्चारण
  5. धैर्य
  6. उचितलयानुसार उच्चारण

4. लेखनकौशलम्

- उद्देश्य पठितस्य लिखिताभिव्यक्तिः
- भाषा शिक्षण का चतुर्थ व अन्तिम कौशल है।
- ध्वनि रूप में विद्यमान भाषांश का लिपि रूप में लिखा जाना ही 'लेखन' है।
- वाणी रूपी भाषा को स्थिर रूप में सम्प्रेषित करना । लेखन के अन्तर्गत सुन्दर एवं अच्छे वर्णों में लिखना सम्मिलित है।
- भाषा के स्वरूप को स्थायित्व प्रदान करता है।
- सभी भाषा कौशलों में सबसे कठिन कौशल लेखन कौशल है।
- इस कौशल में वर्तनी (शुद्धता) का अत्यधिक महत्व है।

लेखन कौशल की आवश्यकता

- भाषा पर सम्पूर्ण अधिकार की प्राप्ति हेतु लेखन अत्यावश्यक हैं।
- लेखन के उपरांत ही पठन संभव है।
- अपने भावों को स्थिर रूप प्रदान करने हेतु।
- लिखित रूप को दूर देश बैठे लोगों को भी बताया जा सकता है।

लेखन कौशल के उद्देश्य-

- भावी को लिपिबद्ध करके स्थायित्व प्रदान करना।
- वर्ण शब्द वाक्य के स्वरूप का ज्ञान
- लेखन कौशल का प्रदर्शन करने के लिए।
- मातृभाषा से संस्कृत में तथा संस्कृत से मातृभाषा में अनुवाद करने की योग्यता का विकास।
- सृजनात्मक शक्ति का प्रदर्शन।
- पढ़े हुए विषय को लिखित रूप में अभिव्यक्त करना।

लेखन कौशल के विकास के उपाय-

- सर्वप्रथम लेखनी पकड़ने व उचित आसन में बैठने का अभ्यास।
- वर्णों व शब्दों के लेखन का अभ्यास
- रिक्तस्थान पूर्ति वाक्य प्रयोग आदि का अभ्यास ।
- वाक्य अनुच्छेद एवं श्रुतलेख का अभ्यास
- अध्यापक अधिकाधिक श्यामपट्ट का प्रयोग करे।
- छात्रों को संस्कृत भाषा में डायरी लिखाने का अभ्यास करवाया जाए।
- संवाद लेखन, आलेखन, अनुच्छेद लेखन, निबंध लेखन, जीवनी, कथा लेखन, सारांश आदि के लेखन का अभ्यास।
- छात्रों को संस्कृत भाषा में पत्र व्यवहार हेतु प्रेरित करके ।

Toppers Notes Unleash the topper in you

लेखनकौशलाभिवृद्धिविषयका विधयः

1. अक्षरस्वरूपानुकरण विधि
2. जेकटॉट विधि
3. मॉण्टेश्वरी विधि
4. श्रुतलेखन विधि
5. स्वतंत्रानुकरण विधि
6. पेस्टालॉजी की रचनात्मक विधि
7. रेखा विधि
8. चित्र विधि
9. संशोधन विधि

1. अक्षरस्वरूपानुकरण विधि / रूपरेखानुकरण विधि (Tracing Method)

- वर्कबुक में छपे वर्णों की विन्दुमाला पर पङ्क्तियों के द्वारा जुड़ाव करके, वर्णों का लेखन।
- सर्वाधिक रूचिकर पद्धति।
- पूर्व प्राथमिक व प्राथमिक कक्षाओं हेतु उपयोगी।

2. जेकटॉट विधि/ दृष्ट लेखन विधि / अनुलेख विधि/ देखो और लिखो विधि

- अध्यापक प्रारंभ में बालकों द्वारा ज्ञात शब्दों का बालकों से उच्चारण करवाता है। तत्पश्चात् अध्यापक श्यामपट्ट पर लिखों या पुस्तक में लिखों शब्दों को अनुकरण द्वारा छात्रों से लिखवाता है।
- अशुद्धियाँ कम होती है।
- विराम चिह्न आदि का ज्ञान भी हो जाता है।
- छात्रों को बाद में बिना देखे लिखने का अभ्यास करवाया जाता है।
- प्राथमिक स्तर के लिए सर्वश्रेष्ठ विधि है।

3. मॉण्टेश्वरी विधि

- इस विधि में बालक को लकड़ी या गत्ते से बने अक्षर दिये जाते हैं, फिर अक्षरों पर अंगुली संचालन व पेंसिल से अनुवर्तन करवाया जाता है।
- बालक अक्षरों को छूता भी है। धीरे-धीरे अक्षरों के स्वरूप से परिचित होकर उन्हें सीख जाता है।
- आँख, कान व हस्त संचालन के प्रशिक्षण पर बल देती है।
- श्रीमती माटेसरी 3 वर्ष की आयु के पश्चात् बच्चे को वर्ण रचना सिखाने का समर्थन करती है।

4. श्रुतलेखन विधि / उक्तलेखन विधि-

- शिक्षक द्वारा उच्चारित (बोले गये) पदों या वाक्यों को सुनकर छात्र लिखते है।
- वाक्य पाठ्यपुस्तक से हो व अध्यापक मध्यमगति से वाचन करें।
- विरामचिह्नों को न बोलें। बल्कि छात्र उन्हें समझने का प्रयत्न करें।
- छात्र स्वयं भावानुकूल विराम चिह्नादि का प्रयोग करें।
- उच्च प्राथमिक व माध्यमिक स्तर के लिए श्रेष्ठ ।

5. स्वतंत्रानुकरण / अनुकरण विधि

- वर्ण रचना सीखाने की यह अत्यंत प्राचीन विधि है।
- इस विधि में अध्यापक फलक, पुस्तिका या श्यामपट्ट पर लिखता है, बालक उन्हीं अक्षरों को पुनः उनके नीचे लिखता है।

6. पेस्टालाजी की रचनात्मक विधि

- इस विधि में अक्षरों को टुकड़ों में तोड़ लिया जाता है और एक-एक टुकड़े की आकृति बनाने का अभ्यास कराया जाता है।
- फिर सभी टुकड़ों को मिलाकर पूरा अक्षर बनाना सिखाया जाता है। जो अक्षर सरल है उन्हें पहले सिखाया जाता है और कठिन अक्षरों को बाद में।
- इस विधि का आधार "सरल से कठिन की ओर" चलना है।

7. रेखा विधि / संश्लेषणात्मक विधि

- देवनागरी लिपि के सभी रेखाओं तथा वृत्तों से बनते है
- इस विधि में शुरू में बच्चे को विभिन्न प्रकार की रेखाएँ खीचने का अभ्यास कराया जाता है जैसे खड़ी रेखा, पड़ी रेखा, तिरछी रेखा, अर्द्ध वृत्त आदि।
- फिर रेखाओं को मिलाकर वर्ण रचना सिखाई जाती है।

8. चित्र विधि

- वास्तव में लिपि का विकास ही चित्रों के द्वारा हुआ है। वैसे भी बच्चा चित्र बनाने में बहुत रूचि रखता है। अतः इस विधि की सहायता से खेल-खेल में बच्चों को वर्ण रचना सिखा दी जाती है जैसे म त, प, न, ग वर्ण, मेज, कुर्सी, नल आदि के चित्र बनाकर सिखाएँ जाते है।
- धीरे-धीरे अभ्यास होने पर बालक अन्य वर्णों को लिखना सीख जाते है।

9. संशोधन विधि

- लेखन में संशोधन का अत्यधिक महत्व है। अध्यापक सामूहिक रूप से संशोधन करवाकर शुद्ध रूप से छात्रों को अवगत करवाता है।

3 CHAPTER

संस्कृतशिक्षणे - अधिगम, संप्रेषणस्य, पाठ्यपुस्तकानि

दृश्य साधन – ?

- वे साधन है जिनको प्रत्यक्ष में देखकर छात्र किसी विषय को सुगमता से समझते हैं।
- ये शिक्षण में प्रयुक्त किए जाने वाले अन्य साधनों की तुलना में सस्ते व सुलभ होते है।
- ये दो प्रकार के होते हैं – सामान्य दृश्य, यांत्रिक दृश्य

(अ) सामान्य दृश्य साधन – जिनके लिये किसी प्रकार की मशीन या विद्युत की जरूरत नहीं होती है। शिक्षक स्वयं ही कक्षा में इन्हें प्रयोग कर सकता है।

1. **श्यामपट्ट –** गद्य, पद्य, कथा व रचना शिक्षण करते समय पाठ के महत्वपूर्ण अंशों, तथ्यों, शब्दार्थी के स्पष्टीकरण हेतु श्यामपट्ट का विशेष महत्व है।
   - पइ में आए जटिल पदों व स्थलों की व्याख्या हेतु चित्रों एवं रेखाचित्रों को बनाने के लिये भी श्यामपट्ट का प्रयोग किया जा सकता है।
   - व्याकरण शिक्षण करते समय आगमन–निगमन विधि से किसी सूत्र में समझाने का एक अत्यन्त सहायक उपकरण है।
   - मौखिक शिक्षण के साथ–साथ श्यामपट्ट के यथोचित प्रयोग से बालक की नेत्रेन्द्रिय भी सक्रिय हो जाती है। जिससे बालक का ज्ञान सुदृढ़, स्थायी और सुनने, देखने की क्रिया से एकाग्रता बढ़ती है।
   - अभ्यास कार्य करवाने, छात्रों में लेखन कौशल विकास में सहायक होता है।
2. **चित्र**
   - संस्कृत भाषा शिक्षण को रोचक एवं सुग्राह्य बनाने में शिक्षक रंगीन एवं आकर्षक चित्रों का प्रयोग कर सकता है।
   - अमूर्त वस्तु अथवा उसकी संकल्पना मूर्तिमान हो जाती है।
   - अक्षर ज्ञान के लिये प्राथमिक स्तर से बहुत महत्वपूर्ण
   - शब्द भण्डार में वृद्धि करना एवं कठिन शब्दों को समझने में उपयोगी
   - छात्रों में निरीक्षण करने व विश्लेषण की प्रवृत्ति जागृत होती है।
3. **मानचित्र**
   - किसी नगर की भौगोलिक एवं ऐतिहासिक स्थिति को समझाने में
   - वर्तमान स्थिति से अवगत कराने में
   - पुरातात्विक स्थानों के बारे में अवगत कराना।
4. **रेखाचित्र**
   - आकृति प्रदान कर विषय वस्तु को स्पष्ट करना
   - चित्र, प्रतिकृति आदि के अभाव में भाषा शिक्षण में प्रयोग
   - बिन्दु का वर्गीकरण दर्शाने
5. **चार्ट**
   - तुलनात्मक अध्ययन करवाने के लिये शब्द रूप तथा धातु रूपों का विभिन्न विभक्तियों में स्वरूप बताने की दृष्टि से समास संधि, प्रत्यय, उपसर्ग एवं कारकों का ज्ञान प्रदान करने में
   - वचन, लिंग, काल, क्रिया के आधार पर रूपान्तरित शब्दों के चार्ट भी
   - छात्रों के अधिगम में सहायक
   - चित्रों, तथ्यों का सुंदर समन्वय कर सरल बनाना

(ब) यांत्रिक दृश्य साधन

1. **चित्र विस्तारक यंत्र**
   - छोटे चित्रों को बड़ा आकार प्रदान करने का कार्य
   - सरल एवं स्वाभाविक अधिगम होता है।
   - प्रस्तुत चित्र ध्वनि रहित, दृश्य साधनों में महत्वपूर्ण
   - इसे 'एपिडाइस्कोप' कहते हैं।
   - इस यंत्र का उपयोग वर्तनी की अशुद्धियों को समझाने, काव्य के मुख्य अंशों की व्याख्या करने में, रचना शिक्षण तथा कथा–शिक्षण में किया जाता है।
2. **प्रक्षेपण यंत्र**
   - ओवर हैड प्रोजेक्टर – में पारदर्शिकाएं तैयार कर अध्यापक कक्षा में प्रस्तुत कर सकता है। ये पारदर्शिकाएं सभी विधाओं में उपयोगी है।
   - प्रक्षेपण यंत्र द्वारा चित्रों का प्रदर्शन करके भी संस्कृत शिक्षण को रोचक बनाया जा सकता है।

- फिल्म स्ट्रिप प्रोजेक्टर – इसके द्वारा किसी घटना से संबंधित अनेक चित्रों का प्रदर्शन करके उसका पूरा बिम्ब छात्रों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है।
- स्टिरियोस्कोप – किसी प्राकृतिक दृश्य एवं ऐतिहासिक स्थल को मूर्त रूप देने में यह यंत्र उपयोगी है।
- एपीडियोस्कोप – छपी हुई पुस्तकों को उस स्कोप के नीचे रखा जाता है और जिसका बिम्ब पर्दे पर आ जाता है।

(स) श्रव्य साधन

- साधन जिनमें ज्ञानार्जन के लिये मुख्यतः श्रवणेन्द्रियों का प्रयोग किया जाता है। इससे छात्रों में श्रवण कौशल का विकास कर विषय के प्रति एकाग्र होने की योग्यता का विकास किया जाता है।

1. आकाशवाणी
- यह दूरस्थ शिक्षा का सस्ता, सुगम एवं बहुमुखी साधन है।
- भारत में सर्वप्रथम संचार उपग्रह 'एपल' द्वारा दूरसंचार एवं डेटा संचार के अनेक प्रयोग किये।
- भाषा विशेषज्ञ प्रत्येक विद्यालय तक पहुंच सके, अतः आकाशवाणी पर प्रसारित उनके भाषण,वार्ता, साहित्य, चर्चा नाटक आदि को सुनवाकर शिक्षक छात्रों को लाभान्वित करते थे।
- श्रवण कौशल, श्रोताओं की एकाग्रता, कल्पना शक्ति का विकास होता है।

2. ग्रामोफोन
- इस प्रकार बार बार विषय को सुना जा सकता है।
- हर स्थान पर उपलब्ध एक सरलतम श्रव्य साधन है।
- उच्चारण के साथ–साथ श्लोकों, धातुरूपों, शब्द रूपों को कण्ठस्थ करने में सहायक

3. ध्वनि अभिलेख (टेपरिकॉर्डर)–
- ग्रामोफोन के रिकॉर्ड स्थायी होते हैं किंतु इसमें टेप अस्थायी होती है।
- 1900 में डेनमार्क के पॉलसेन ने एक तार टेपरिकॉर्डर का आविष्कार किया।
- इसमें धातु या प्लास्टिक का फीता होता है जिसमें रेकॉर्ड के समान आवाज भर दी जाती है।
- उपकरण की सहायता से छात्रों का उच्चारण अभ्यास, बोलने की गति, स्तर प्रवाह आदि ठीक करवाया जाता है।

4. (लिंग्वाफोन)
- भाषा शिक्षण में प्रयुक्त होता है जिससे ध्वनियों के उच्चारण, काव्य शिक्षण एवं व्याकरण शिक्षण को प्रभावशाली ढंग से किया जा सके।

5. भाषा प्रयोगशाला
- विद्युत की सहायता से नियंत्रित कर एक कक्ष में सभी छात्र बैठकर भाषा सीखते है।
- एक और श्रव्य एवं दृश्य–श्रव्य प्रकार की हो सकती है।

दृश्य–श्रव्य साधन

- एक साथ देख व सुनकर ज्ञान ग्रहण कर सकते हैं।
- **दूरदर्शन**
- अमेरिकी हॉवर्ड विश्वविद्यालय के हेराल्ड हण्ट नामक व्यक्ति ने इसका प्रयोग शिक्षा प्रदान करने के लिये किया।
- **राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986** में दूरस्थ शिक्षा एवं दूरदर्शन के उपयोग पर बल दिया गया।
- **श्रव्य –दृश्य अभिलेख**
- इन अभिलेखों के द्वारा अधिगमकर्ता अपनी इच्छानुसार कभी भी कार्यक्रम देख व सुन सकता है।
- **संगणक –** वर्तमान में अपरिहार्य आवश्यकता बन गया है।
- संस्कृत शिक्षक भी अपने शिक्षण को रोचक एवं सुग्राह्य बनाने के लिये संगणक का प्रयोग कर सकते हैं।
- **इंटरनेट प्रणाली –** इस प्रणाली में कम्पयूटरों के मध्य तेज गति से आँकड़ों का सम्प्रेषण, इलेक्ट्रॉनिक, अखबार पढ़ना, विश्व के किसी भी व्यक्ति से बात करना, देश–विदेश के पुस्तकालयों से सम्पर्क रखना, पत्र–पत्रिकाओं का अध्ययन भी संभव है।

4 CHAPTER संस्कृतभाषाशिक्षणस्य मूल्यांकन

शैक्षिक मूल्यांकन

- पाठ्यक्रम के उद्देश्यों एवं मूल्यो की ओर छात्रों की प्रवृत्ति और प्रगति का आकलन करना।
- मूल्यांकन द्वारा ही छात्रों की विषयगत कठिनाईयों का पता लगता है।
- शिक्षा एवं मूल्यांकन दोनों का घनिष्ठ संबंध है। मूल्यांकन शिक्षा प्रक्रिया का एक आवश्यक अंग है।
- समय – समय पर छात्रों के अर्जित ज्ञान एवं शिक्षक के स्वयं के शिक्षण का परीक्षण करने हेतु मूल्यांकन का स्थान महत्वपूर्ण है।
- मूल्यांकन द्वारा छात्र एवं शिक्षक दोनों ही व्यक्तिगत योग्यताओं का ज्ञान हो जाता है।
- छात्रों को सही मार्गदर्शन देने में शिक्षक को सुविधा होती है।
- छात्र में चारों कौशल के ज्ञान को परिपुष्ट करने में सहायता मिलती है।
- शिक्षण विधियों में सुधार आसानी से किया जा सकता है।

मूल्यांकन

- मूल्य + अंकन से मिलकर बना है। जिसका अर्थ मूल्यों को अंकित करना।
- **परिभाषाएँ** –
- **कोठारी शिक्षा आयोग** – मूल्यांकन एक सतत् प्रक्रिया है यह सम्पूर्ण प्रणाली का अभिन्न अंग है। इसका शिक्षण उद्देश्य से घनिष्ठ संबंध है।
- **एन.सी.ई.आर.टी** – मूल्यांकन वह प्रक्रिया है जिससे उद्देश्यों की प्राप्ति, अनुभव का प्रभाव, शिक्षा के उद्देश्यों की सिद्धि का पता लगाया जा सकता है।

मूल्यांकन विधियाँ

1. **सतत् एवं समग्र मूल्यांकन की विशेषताएं**
   - विधार्थियों के अधिगम के स्तर पर निश्चित समय अंतराल द्वारा ज्ञान होता है।
   - विधार्थियों की आवश्यकताओं एवं क्षमताओं के आधार पर शिक्षक उपचारात्मक विधियों का प्रयोग कर सकता है।
   - उन विद्यार्थियों की योग्याताओं का ज्ञान होता है जो शैक्षिक गतिविधियों के बजाय अन्य पाठ्यगामी क्षेत्रों से बेहतर प्रदर्शन करते है।
2. **सतत् एवं समग्र मूल्यांकन की उपयोगिता**
   - मूल्यांकन निर्धारित पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तक और उद्देश्य की संपूर्ति के लिये
   - शिक्षक द्वारा अपनाई गई शिक्षण विधियों की उपयुक्तता के लिये ज्ञान
   - विद्यार्थियों में सीखने की प्रक्रिया को उत्प्रेरित करने के लिये
   - विद्यार्थियों की अभिवृत्तियों एवं रूचियों का पता करने
   - विद्यार्थियों को स्वयं की कमजोरियों, क्षमताओं एवं कुशलताओं का ज्ञान कराने के लिये
   - शिक्षण कार्य और विद्यार्थियों से संबंधिति सामाजिक, नैतिक, शारीरिक,शैक्षणिक समस्याओं का निदान करने के लिये।
3. **समग्र एवं सतत् मूल्यांकन के उपकरण**
   - बालक के व्यवहार में परिवर्तन का स्पष्ट ज्ञान करा सकें।
   - मूल्यांकन सूचनाओं की स्मृति पर बल न देकर व्यवहारगत उपलब्धि पर बल देता है जिन साधनों के द्वारा बालक के ज्ञान और व्यवहार में हुए परिवर्तनों एवं उसकी व्यक्तिगत विशेषताओं का मूल्यांकन करते हैं
   - **शिक्षक निर्मित परख –पत्र** दैनिक शिक्षक के दौरान, एक निश्चित समयावधि के बाद या सत्रान्त में बालक की उपलब्धि या उसकी कमियों के क्षेत्र को ज्ञात करना
   - **छात्र स्व–मूल्यांकन विधियां –** छात्र स्वयं ही अपने कार्य को देखकर उपयुक्तता के आधार पर कुछ प्रश्न करते हुए निर्मित वस्तु को आँकता है तो वह स्व–मूल्यांकन करता है।
   - **मनोवैज्ञानिक परीक्षण –** मनोवैज्ञानिकों द्वारा विकसित प्रणाली एवं प्रमाणीकृत परीक्षण जैसे – बुद्धि परीक्षण, अभिवृत्ति परीक्षण, अभिरूचि परीक्षण इत्यादि।
4. **सतत् एवं समग्र मूल्यांकन के उद्देश्य**
   - चिंतन प्रक्रिया पर जोर देना व कंठस्थ करने पर बल न देना।
   - शिक्षा के उद्देश्यों को स्पष्ट करना एवं उनकी उपयुक्तता की जाँच करना।
   - सफलता की मात्रा के आधार पर पाठ्यक्रम का शैक्षिक कार्यों में परिवर्तन करना।

- सीखने के लिये प्रोत्साहित करना, क्षमता के अनुसार परिवर्तन के अवसर प्रदान करना।
- सर्वांगीण विकास के लिये गति प्रदान करना,बालकों का वर्गीकरण प्रयोजनाओं के अनुसार चयन करना।
- निर्देशन हेतु अवसर प्रदान करना, शिक्षा के उद्देश्यों को स्पष्ट करना।

5. मूल्यांकन का महत्व

- उद्देश्यों की प्राप्ति का पता लगाना, उपचारात्मक शिक्षण के लिये, उपादेयता एंव कमजोरियों का पता लगाने के लिये।
- कक्षा में स्तरीयकरण, पुनर्बल और शिक्षा आव्यूह में विकास एवं सुधार के लिये।

व्यवहारिक परिवर्तन के लिये प्रमापीकृत और अप्रमाणीकृत विधियां –

प्रमापीकृत विधि	**अप्रमाणीकृत विधि**
बुद्धि परीक्षण, निष्पतिपरीक्षण, अभियोग्यता परीक्षण, अभिवृत्ति परीक्षण, अभिरूचि एवं व्यक्तित्व परीक्षण	संचारी – अभिलेख, समाजमिति, प्रक्षेपण विधियां, निर्धारण क्रम, पड़ताल सूची, प्रश्नावली, साक्षात्कार, सामसायिक जाँच (मौखिक, लिखित, व्यावहारिक) आदि।

5 CHAPTER संस्कृत शिक्षण सिद्धान्ताः

भाषा का शिक्षण कई मनोवैज्ञानिक और व्यवहारिक सिद्धान्तों पर आधारित है। शिक्षण हेतु आधार स्वरूप कई नियम होते हैं, जिनका शिक्षण के दौरान ध्यान रखा जाना चाहिए। इन्हें भाषा शिक्षण के सामान्य सिद्धान्त कहते है।

संस्कृत शिक्षण में भी कई भाषा शिक्षण सिद्धान्त हैं, जिनको आधार बनाकर शिक्षण को सफल किया जा सकता है।

1. स्वाभाविकतायाः सिद्धान्तः / प्राकृतिवाद्याः सिद्धान्तः

- भाषा शिक्षण एक प्राकृतिक प्रवृत्ति है। भाषा शिक्षण के लिए जिस शारीरिक एवं मानसिक शक्ति की आवश्यकता होती है। वह बालकों में जन्म से ही विद्यमान रहती है।
- शैशवावस्था में भाषा शिक्षण का प्रयास श्रेष्ठ होता है क्योंकि भाषा सीखने की क्षमता शैशवावस्था में तीव्र, फिर उत्तरोत्तर घटती जाती है।
- प्रारम्भ में बालक अनुकरण के द्वारा माता-पिता तथा परिवार के अन्य सदस्यों के साथ मातृभाषा सरलता से सीखता है व उसका अभ्यास करता है।
- भाषा अर्जन में वातावरण का महत्वपूर्ण स्थान होता है।
- भाषा शिक्षण में भाषा कौशलों के स्वाभिमान क्रम-श्रवण भाषण-पठन-लेखन को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए।
- प्रारम्भिक अवस्था में लिखित पक्ष की अपेक्षा मौखिक पक्ष (श्रवण + भाषण) पर अधिक बल देना चाहिए।
- छात्रों को जिस भाषा में ग्रहण हो, उसी भाषा में अभिव्यक्ति हेतु छात्रों को उत्साहित करें।

2. रूचेः सिद्धान्तः

- पाठशाला का परिवेश इस प्रकार होना चाहिये जिसमें बालक स्वभाविक रूचि का प्रदर्शन कर सके।
- जिस कार्य को करने में बालक की रूचि होती है उस कार्य को करना अधिक सरल होता है।
- हरबर्ट के अनुसार शिक्षकों को बालक की रूचि का सर्वदा ध्यान रखना चाहिए।
- पाठ पढ़ाने से पूर्व अध्यापक को पाठ में बालकों की रूचि पैदा करनी चाहिए जिससे व पाठ को अच्छी प्रकार समझ सकें।
- अन्ताक्षरी, वाद-विवाद, भाषण, निबंध, सस्वर वाचन आदि पाठ्य सहगामी क्रियाओं के आयोजन द्वारा संस्कृत शिक्षण को रोचक एवं आकर्षक बनाया जा सकता है।
- संस्कृत शिक्षण में दृश्य, श्रव्य सामग्री, श्यामपट्ट आदि कौशलों तथा क्रीड़ाविधि का प्रयोग किया जाना चाहिए।
- शिक्षण में अध्यापक व छात्र दोनों की रूचि होनी चाहिए।
- छात्रों के साथ स्नेह और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार किया जाना चाहिए।

3. क्रियाशीलतयाः प्रयोगाभ्यासयोः च सिद्धान्तः

- भाषा विज्ञान के साथ-साथ कला भी है अन्य कलाओं की तरह भाषा शिक्षण के लिए भी अभ्यास की आवश्यकता पड़ती है।
- संस्कृत छात्रों की मातृभाषा नहीं है। अतः संस्कृत शिक्षण के लिए भी दीर्घकालीक अभ्यास अपेक्षित है और मौखिक और लिखित दो प्रकार के अभ्यासों की आवश्यकता प्रसिद्ध है।
- अभ्यास रूचिपूर्ण, सतत् एवं क्रमबद्ध होना चाहिए, जिससे की भाषा शिक्षण सरल हो जाये।
- अभ्यास बालक की भाषा को शक्ति प्रदान करता है तथा उसमें माधुर्य एवं सरलता उत्पन्न करता है।
- अभ्यास के द्वारा ज्ञान का निरन्तर विकास होता है तथा विस्तृत रुकति है।
- छात्रों को अधिकाधिक भाषा प्रयोग व अभ्यास के अवसर प्रदान करना चाहिए।

4. अनुकरणस्य सिद्धान्तः

- अस्यैव अपरं नाम संशोधन सिद्धान्तः
- बालक अनुकरणशील होते है।
- अतः प्रारम्भ में बालक अधिकांशतः अनुकरण द्वारा ही सीखते है।
- भाषा को अनुकरण के माध्यम से ही सीखा जाता है।
- शिक्षण के समय अधिक से अधिक अनुकरण के अवसर देकर उनकी त्रुटियों का संशोधन करना चाहिए।

5. सक्रियतासिद्धान्तः-

- भाषा शिक्षण प्रक्रिया में छात्रों की सक्रियता अतिआवश्यक है।
- सक्रियता द्वारा मानसिक विकास तीव्र गति से होता है।
- अध्यापक को संस्कृत में अपने विचारों को छात्रों को बोलने का अधिकाधिक अवसर देना चाहिए।
- अध्यापक को शिक्षण से सम्बन्धित पाठ्य सहगामी क्रियाओं में भाग लेने के लिए छात्रों को प्रेरित करना चाहिए।
- पाठ के विषय में विविध प्रश्न छात्रों को पूछने के अवसर दिये जाने चाहिए।
- पुस्तकालय में सरल संस्कृत की पुस्तकों को पहने के लिए छात्रों को प्रेरित किया जाना चाहिए।

Unleash the topper in you

6. **अनुपातक्रमयोः सिद्धान्तः / वर्गीकरणस्य सिद्धान्तः-**
- भाषा शिक्षण के विभिन्न उद्देश्यों को अनुपातिक रूप से अर्थात् समुचित मात्रा में प्राप्त किया जाना चाहिए।
- भाषा में भावों के ग्रहण की क्षमता तथा भावों के अभिव्यक्ति की क्षमता का विकास करना आवश्यक है।
- भाषा का शिक्षण क्रमशः होता है। पहले मौखिक कार्य का तथा फिर क्रमश: लिखित कार्य का शिक्षण होना चाहिए।
- भाषा शिक्षण में समस्त उद्देश्यों व पक्षों पर उचित मात्रा में ध्यान दिया जाना चाहिए।
- प्रत्येक अवस्था में "ज्ञात से अज्ञात" तथा "सरल से कठिन" की ओर बढ़ना चाहिए।
- नेत्रों से पहले कान, आवृत्ति से पहले प्राप्ति, स्वतंत्र कार्य से पूर्व अध्यास, व्यक्तिगत कार्य से पहले सामूहिक कार्य सिद्धान्तों का प्रयोग होना चाहिए।

7. **वैयक्तिक भिन्नतायाः सिद्धान्तः**
- प्रत्येक बालक बौद्धिक एवं शारीरिक रूप से भिन्न-भिन्न होते है। एक ही कक्षा के सभी छात्र रूचि क्षमता बुद्धि आदि की दृष्टि से भिन्न होते है। व्यक्तिगत क्षमता के अनुसार ही भाषा शिक्षण किया जाना चाहिए।
- सभी प्रकार के बालकों के लिए अलग-अलग अभ्यास माला का निर्णय करना चाहिए।
- कुशाग्र बालकों को उन्नति के अवसर, सामान्य बालाकों को आगे बढ़ने हेतु प्रेरणा एवं मंद बुद्धि बालकों को प्रोत्साहन देना चाहिए।

8. **प्रयत्नस्य सिद्धान्तः**
- संस्कृत भाषा जटिल सूक्ष्म प्रक्रिया से प्राप्त होती है अतः इसके शिक्षण के लिए कुछ प्रयास करना पड़ता है।
- वर्ण-पद-वाक्यों का ठीक तरह से ज्ञान के लिए प्रयत्न करना चाहिए।
- श्रुत लेखन, वाक्य संरचना, वाचन आदि में दक्षता प्राप्त करनी चाहिए।

9. **बहुमुखविधि सिद्धान्तः**
- एक उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए उस उद्देश्य से सम्बन्धित सभी विषयों पर ध्यान देना चाहिए अर्थात् बहुविध प्रयत्न करना चाहिए।

10. **मौखिककार्थस्य सिद्धान्तः**
- भाषा शिक्षण की प्रक्रिया कर्ण और जिह्वा के माध्यम से प्रारम्भ होती है।
- भाषा शिक्षण में सर्वप्रथम मौखिक कार्य (श्रवण, भाषण) उसके बाद लिखित कार्य (पठन, लेखन) करवाना चाहिए।

11. **उद्देश्यचयनस्य विभाजनस्य च सिद्धान्तः**
- शिक्षण के समय शिक्षक को पाठ्यपुस्तक में से समयानुकूल विभिन्न विषयों का चयन करते हुए तथा पाठों की विषय वस्तु से सम्बद्धता जटिलता, सरलता उपयोगितादि प्रकार से विभाजन करके शिक्षण करना चाहिए।

12. **भावात्मक अभिव्यक्तेः सिद्धान्तः**
- शिक्षण के समय छात्रों को भावनाओं की अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिए, जिससे बालक जुड़ाव के साथ शिक्षण में भाग लें।
- लेख लिखकर, सम्भाषण, गीत-गान, तर्क आदि माध्यक से भावों की अभिव्यक्ति संभव है।

13. **एकतायाः सहभागितायाः च सिद्धान्तः-**
- शिक्षण के समय सभी प्रकार के बालकों की सहभागिता होनी चाहिए।
- यह कार्य शिक्षण के साथ-साथ विविध सहशैक्षिक गतिविधियों में छात्रों की सहभागिता बढ़ाकर किया जा सकता है।
- भाषा शिक्षण में मौखिक व लिखित कार्य साथ-साथ होने चाहिए।
- इसके लिए श्लोकों या बाल गीतों का सरस्वर वाचन, संभाषण शिविरों का आयोजन, निबंधलेखन, वाद-विवाद, भाषण आदि क्रियाओं का आयोजन कराना चाहिए।

ToppersNotes Unleash the topper in you

6 CHAPTER नवीन विधियाँ/आधुनिक विधिया

लॉर्ड मैकाले की शिक्षा पद्धति के बाद से संस्कृत शिक्षण के लिए आज तक प्रयुक्त की जाने वाली विधियों को इस श्रेणी में रखा गया है।

1. पाठ्य–पुस्तक विधि

- भारत में पाठ्य–पुस्तक विधि के समर्थक ''डॉ. वेस्ट'' थे।
- इनके मतनानुसार शिक्षण को इस ढ़ग से सुनियोजित किया जाना चाहिये ताकि छात्र जिस अवस्था में भी विद्यालय छोड़े वे अपने पठित अंश का अधिक से अधिक लाभ उठा सकें।
- पठित अंश का लाभ आधिकाधिक उठाने में पाठ्य–पुस्तक विधि महत्त्वपूर्ण है।
- इस विधि में पाठ्यपुस्तक के पाठ ही सम्पूर्ण अध्ययन के केन्द्र–बिन्दु होते हैं।
- इसके अन्तर्गत कक्षा के स्तरानुसार विषय–वस्तु को वर्गीकृत किया जाता है।
- इसमें क्रमशः वर्णमाला, छोटे शब्दों, वाक्यों और अनुच्छेदों का ज्ञान करवाया जाता है।
- इस विधि में मातृभाषा के द्वारा नवीन शब्दों का अर्थ बतलाया जाता है।
- इस विधि में आदर्श वाचन, अनुकरण वाचन, प्रश्नोत्तर विधि को अपनाते हुए मौन पठन करवाया जाता है। तत्पश्चात् पाठ का मुख्य भाव स्पष्ट किया जाता है।
- सम्पूर्ण पाठ पढा लेने के बाद व्याकरण और अनुवाद का अभ्यास करवाया जाता है।
- छात्र अथवा प्रौढ़ सभी शिक्षक की सहायता के बिना स्वतंत्र रूप से संस्कृत का ज्ञान प्राप्त कर सकें इस विधि का मुख्य उद्देश्य है।

गुण

1. यह एक मनोवैज्ञानिक विधि है। इसमें शिक्षण सूत्रों का अनुसरण पूर्णतः किया जाता है।
2. छात्रों के शब्द भण्डार में वृद्धि करने में सहायक।
3. छात्रों में जिज्ञासा उत्पन्न करना।
4. छात्रों को अभ्यास का पूर्ण अवसर प्रदान करना।
5. इस विधि द्वारा संस्कृत शिक्षण की प्रक्रिया में नियमितता तथा समरूपता आती है।
6. सभी कौशलों का विकास सम्भव।

दोष

1. शिक्षण केवल पाठ्यपुस्तक पर आधारित है।
2. यदि पाठों को व्याकरण के नियमों पर आधारित भी कर लिया जाए तब भी व्याकरण के क्रमबद्ध ज्ञान का अभाव रहता है।
3. इस विधि में शब्दार्थ तथा वाक्यार्थ आदि को महत्त्व दिया जाता है।
4. मौखिक एवं लिखित कार्य सीमित होता है।
5. छात्रों में समीक्षात्मक दृष्टिकोण का विकास नहीं हो पाता हैं।
6. यह एक यांत्रिक विधि है। इसमें वाक्यों का वाचन करते हुए मातृभाषा में अनुवाद करवाया जाता है।

2. प्रत्यक्ष विधि

- इस विधि को 'डायरेक्ट मैथड्'' ''सुगम पद्धति'' अथवा ''निर्बाध विधि'' भी कहा जाता है।
- सर्वप्रथम अंग्रेजी भाषा सिखाने के लिए इस विधि का प्रयोग किया गया।
  - ➢ **प्रर्वतक** – प्रोफेसर वी.पी. बोकिल (अल्फिस्टोन हाई स्कूल, बम्बई में संस्कृत शिक्षण में सर्वप्रथम प्रयोग)
  - ➢ **समर्थक** – जेस्परसन, गेटे
  - ➢ **विरोधी** – वामन शिवराम आप्टे
- इस विधि का सर्वप्रथम प्रयोग फ्रांस में 1901 में ''गुईन'' ने ''अंग्रेजी शिक्षण'' में किया।
- इस विधि से भाषा–विशेष को पढ़ाते समय उसी ही भाषा को माध्यम रखा जाता है।
  जैसे – संस्कृत को संस्कृत माध्यम से, अंग्रेजी को अंग्रेजी माध्यम से।
- इस विधि में तीन मुख्य बिन्दुओं को ध्यान में रखा जाता है –
  - (i) किसी भी भाषा को सिखाते समय मातृभाषा का प्रयोग वर्जित है।
  - (ii) मौखिक कार्य को प्रधानता दी जानी चाहिए।
  - (iii) वस्तु और शब्द के बीच सीधा संबंध स्थापित करते हुए पढ़ाया जाए।
- इस विधि से संस्कृत शिक्षण स्वतंत्र रूप से किया जाता है।
- **इस विधि का प्रमुख उद्देश्य** – संस्कृत भाषा शिक्षण हेतु छात्रों के लिए संस्कृतमय वातावरण का निर्माण करना।

प्रत्यक्ष विधि के उद्देश्य

1. छात्रेषु अभिरूच्युन्पादनम्।
2. शिक्षणे प्रभावोत्पादकतायाः सम्पादनम्।
3. विशिस्ये भाषाणकौशले नैपुण्योत्पादनम्।
4. यथार्थज्ञान सम्पदनम्।
5. भाषायां सहज सौंदर्यास्वादने दसतोत्पादनम्।
6. कक्षायां संस्कृतपरिवेशप्रकल्पनम्।
7. संस्कृत भाषा शिक्षणाय संस्कृते एवं श्रवणं, भाषणं, पठनं लेखनं, चकरणीयम्।

गुण

1. शिक्षा सिद्धांतानुकूला अस्ति इयं पद्धतिः।
2. पठने–लेखने भाषणे च पर्याप्तः अवसरः उपलभ्यते।
3. छात्राणां संस्कृतस्य शुद्धोच्यारणे अभ्यासो भवति।
4. इसमें छात्र व शिक्षक दोनों सक्रिय रहते है क्योंकि वार्तालाप को विशेष महत्व दिया जाता है।
5. संस्कृत भाषा को शिक्षा को ऊँचा उठाने में सहायक है।
6. छात्रों में स्वतंत्र रूप से संस्कृत में अपने विचारों को प्रकट करने की योग्यता का विकास होता है।

दोष

1. प्राथमिकस्तरे एषा नोपयुक्ता भवति।
2. बुद्धिमतां छात्राणां कृते एवं उपयुक्ता।
3. दृश्यश्रव्य साधनानाभावे अध्यापनं नीरसं, निष्क्रियञ्च भवति।
4. विस्तृत व्याकरणशास्त्रस्य अनेके नियमाः स्पष्टीकर्तुं न शक्यन्ते।
5. संस्कृत की प्रत्येक विद्या को इस विधि के माध्यम से नहीं पढ़ाया जा सकता है।
6. इस विधि में पढ़ाने के लिए अधिक समय चाहिए जबकि विद्यालयों में संस्कृत के कालांश सीमित है।
7. योग्य अध्यापकों का अभाव।

निष्कर्ष – प्रारम्भिकस्तरे भाषाशिक्षणे पद्धतिरियं प्रयोजनकरीति शिक्षाशास्त्रिणामनुभवो वर्तते। यत्र पाठशालासु विद्यापिठेषु संस्कृत महाविद्यालेषु च संस्कृतेन व्यवहारः क्रियते, संस्कृत कार्यक्रमाः भवन्ति, तत्र संस्कृतमयं वातावरणं भवति। छात्राणां श्रवणकौशले भाषण कौशलञ्च उत्पादयितुं प्रभवन्ति।

3. विश्लेषणात्मक विधि

- यह विधि ''पूर्ण से अंश की ओर'' इस सूत्र पर आधारित है।
- इस विधि से शिक्षण करते समय शिक्षक पहले सम्पूर्ण पाठ की वस्तु छात्रों के समक्ष संक्षेप में प्रस्तुत करता है। तत्पश्चात् पाठ के विभिन्न अंशों को शिक्षण करता है।
- संस्कृत शिक्षण में विशेषतः व्याकरण व कथा करते समय इसका प्रयोग अधिक उपयोगी है।

4. हरबार्टीय पञ्चपदी

- हरबार्ट जान फेडरिक (1776-1841) जर्मनदेशीयः
- अयमादौ शिक्षावेत्ता तदनन्तरं तत्त्ववेत्रा च।
- अयं शास्त्रीय शिक्षण पद्धति प्रतिपादितवान।
- शिक्षणविधाने अनेन प्रतिपादितानि पञ्चसोपानानि सर्वत्र विख्यातानि।
- अध्यापक–शिक्षणगतायाः पाठयोजनायाः निर्माणे अनेन प्रतिपादितवानि, सोपानानि सर्वत्र उपयुज्यन्ते।

हरबार्ट महोदयेन प्रतिपादितानि सोपानानि पञ्च।

(i) प्रस्तावना (उन्नमुखीकरणम्) – पूर्वज्ञानात् परिचिंतभूत्वा नवीनज्ञान प्रस्तुतीकरण दिशायां स्पष्टविवेचनम्, उद्देश्यकथनम्, उत्साह, वर्द्धनम्, पाठोन्मुखीकरणम्, सामान्य विशेष्योद्देश्यानि।

(ii) प्रस्तुतीकरणम् (प्रदर्शनम्)

- छात्राणां मानसिक क्रियाः, संक्रियं कारयित्वा नवीनपाठ प्रस्तुतीकरणम्।
- विषयोपस्थापने अध्यापक द्वारा आदर्शवाचनम्, छात्रैः अनुकरणवाचनम् सन्धि–विच्छेद, समास विग्रहः, दण्डान्वयः, खण्डान्वयः, विवेचनम् भाव परीसायाः प्रश्नाः आगच्छन्ति।

(iii) तुलना (अमूर्तिकरणम्)

- पाठ्यविषयं स्पष्टीकरणार्थं अन्येन उद्धरणेन तुलनां कारयित्वा अर्थः बोधगम्यः करणीयः
- भाषा शिक्षणे काठिन्य–निवारणम्, विस्तृत – व्याख्यानम्।

(iv) सामान्यीकरणम्

सम्पूर्ण पाठस्य सारांशः, पुनरावृत्तिः, शब्दार्थ–विवेचनम्। भावार्थ–कथनम्। कविताशिक्षणे समान भावस्य कविताः बोधगम्याः करणीयम्।

(v) प्रयोगः अनुप्रयोगः

- अर्जितज्ञानस्यावश्यकतानुसारं प्रयोगः (अभ्यासकार्यः) करणीयः।
- कक्षा कार्यम् एवं गृह कार्यमपि प्रयोगाय प्रदातव्यम्।

उद्देश्यानि

1. खण्डशः पाठयांशबोधनम्
2. प्रस्तावनातः आरभ्य गृहकार्यं यावत् छात्रेषुत्साहससंवर्धनम्।
3. प्रस्तावना पाठोन्मुखीकरणसम्पादनम्।
4. तुलनात्मकज्ञानसम्पादनम्।
5. अर्जितज्ञानेन साकं प्रस्तुत ज्ञानेन सह संबंध स्थापनम्।
6. ज्ञातांशस्य दृढ़ीकरणाय गृहकार्यदानम्।

गुण

1. छात्राणा मवगाहन शक्तिस्सं वर्धिता भवेत्।
2. छात्राणां स्वयंशक्तिः सवंर्धिता भवेत्।
3. इयमेका मनोवैज्ञानिकी पद्धतिः।
4. अनया पद्धत्या प्रतिपंद प्रतिवाक्यं च पूर्णतयाध्येतुं शक्यते।
5. छात्रः निरन्तरं परीक्षिताः भवेयुः।
6. कक्षात्यागानन्तरमपि छात्राः पाठयांशे संलग्नाः भवेयुः।
7. अनया पद्धत्या बोधनाय अध्यापकाः अपि उत्साहिनः छात्राश्च सदा सक्रियाः भवेयुः।

दोष

1. पाठ्यक्रमः समेय पूर्णः न भवेत्।
2. ज्ञानर्जनाय सुदीर्घः कालः भवेत्।
3. बुद्धिमतां छात्राणां कृते एव एषा उपयुक्ता भवेत्।

5. मूल्यांकन विधि

यह हरबार्ट पञ्चपदी का विकसित रूप है।

- इसमें प्रत्येक सोपान से सम्बद्ध उद्देश्य की प्राप्ति हेतु कक्षा में किये जाने वाले कार्यकलापों का संयोजन कर साथ–साथ मूल्यांकन भी किया जाता है।
- यह एक उद्देश्यनिष्ठ विधि है, जो छात्र के स्थायी ज्ञान को परखती है।
- इससे शिक्षक व शिक्षार्थी दोनों की दृष्टि से पाठ की सफलता की परीक्षा की जाती है।
- शिक्षण में उद्देश्य एवं व्यवहारगत परिवर्तन का प्रारम्भ सर्वप्रथम बी.एस. ब्लूम ने अपनी पुस्तक ''टेक्सोनोमी ऑफ एजूकेशनल ऑब्जोक्टिक्स'' से किया। तत्पश्चात् रॉबर्ट मेगर ने भी शैक्षिक उद्देश्यों पर प्रकाश डाला है।
- इस विधि में निम्नलिखित सोपानों का अनुसरण किया जाता है–

1. **उद्देश्य** – किसी भी कार्य को सोद्देश्य किया जाता है। अतः शिक्षण प्रारम्भ करने से पूर्व शिक्षक भी पाठ से संबंधित उद्देश्यों का निर्धारण करता है।
2. **व्यवहार रूप** – निर्धारित उद्देश्यों के आधार पर छात्र के पूर्व ज्ञान में किस सीमा तक परिवर्तन आया ? नवीन ज्ञान कितना प्राप्त हुआ ? इसे इस सोपापन में लिखा जाता है।
3. **पाठ्य बिन्दु** – पाठ को किन–किन बिन्दुओं के आधार पर पढ़ाया जाना चाहिये उनका निर्धारण किया जाता है। भाषा को पाठों में वाचन, प्रश्नोत्तर, काठिन्य निवारण, पुनरावृत्ति आदि सभी इसमें सम्मिलित होते हैं। व्याकरण तथा रचना शिक्षण करते समय विषय वस्तु के बिन्दु भी इसमें सम्मिलिति होते हैं।
4. **शिक्षक का कार्य** – पाठ्य वस्तु को भली भाँति स्पष्ट करने के लिए शिक्षक किन–किन क्रियाओं, विधियों व दृश्यश्रव्य सामग्री का उपयोग करेगा, वह सब इस बिन्दु में सम्मिलित होता है।
5. **छात्र के कार्य** – कक्षा में शिक्षक के साथ छात्रों का सक्रिय होना अत्यन्त आवश्यक है। इसलिए प्रत्येक पाठ के लिए कक्षा–कक्ष में छात्रों को अभिप्रेरित करने व सक्रिय रखने के लिए जो पूर्व चिन्तन व तैयारी की जाती है, उसे इस बिन्दु के अन्दर रखा जाता है।
6. **मूल्यांकन** – यह उद्देश्यनिष्ठ शिक्षण का एक महत्वपूर्ण सोपान है। इसमें प्रत्येक सोपान की सफलता की जाँच हेतु मूल्यांकन प्रश्न बनाए जाते है तथा प्रत्येक पाठ के अन्त में मूल्यांकन प्रश्नों को स्थान दिया जाता हैं।

गुण

1. यह एक मनोवैज्ञानिक विधि है, क्योंकि इसमें मूल्यांकन साथ–साथ चलता है। सही प्रतिक्रियाओं पर छात्र को अभिप्रेरित व पूर्णबलित होने का अवसर मिलता है।
2. शिक्षक को अपने शिक्षण में सुधार करने की उचित दिशा का ज्ञान होता है।

दोष

1. मूल्यांकन केन्द्रित होने के कारण शिक्षण में स्वाभाविकता की कमी आ जाती है।
2. छात्र पर निरन्तर मूल्यांकन का दबाव बना रहता है।

6. संरचना विधि

- इसमें वाक्यों की संरचना के ऊपर बल दिया जाता है।
- वाक्य की रचना के दौरान ही व्याकरणात्मक एवं शब्दकोशात्मक ज्ञान को प्रस्तुत किया जाता है।
- इस विधि के द्वारा प्रत्यक्ष विधि को बल प्रदान किया जाता है, क्योंकि वाक्यों की संरचना का ज्ञान होने के बाद छात्रों को उस भाषा को समझने में ज्यादा श्रम नहीं करना पड़ेगा।
- वाक्य की संरचना के दौरान कर्ता, कर्म अव्यय, उपसर्ग आदि का ज्ञान दिया जाता है।
- अतः यह विधि प्रत्यक्ष विधि को सफल बनाने के लिए ही है।

7. समवाय विधि – संयुक्त विधि/समाहार विधि/सहयोग विधि

- बोकिल की 'नवीनविधि' आप्टे की 'मनोवैज्ञानिकविधि' तथा हू परिकर की 'विश्लेषण – संश्लेषणात्मक विधि का मिश्रण है।
- इस विधि में व्याकरण की शिक्षा अलग से नहीं दी जाती अपितु गद्य, पद्य, रचना कथा, अनुवाद, आदि पढ़ाते समय व्याकरण प्रासंगिक रूप में पढ़ाया जाता है।
- इसी संश्लेषणात्मक विधि का नाम **"Electic Method"** रखा गया है।

Toppersnotes
Unleash the topper in you